सूर का राम काव्य

सूर का राम काव्य

(विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन की
एम ए हिन्दी उपाधि के लिये
स्वीकृत शोध प्रबन्ध)

निलोर चन्द्र गुप्ता
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
शासकीय महाविद्यालय, बारा
(राजस्थान)

राजश्री प्रकाशन
मथुरा

C

त्रिलोक चन्द्र गुप्ता

समर्पण—

☆ प्रिय पप्पू को—

जिसको मैंने जी भर कर कभी प्यार नहीं किया, जिसको गोद मे उठाकर प्यार के लिये जी तरसता रहा, और जिसकी यादों ने मेरे अन्त स्थल को झकझोर कर क्रूर विधाता के प्रति आस्थाहीन बना दिया—

तुम बिन सूना लगता जीवन, सूने साझ सवारे।
कहा चल दिये मुझे छोडकर मेरे राजदुलारे ॥

लगा लगा कर काजल निस दिन मैंने नजर उतारी।
भूल गई सारा दुःख लखकर वह मुस्कान तुम्हारी ॥

याद बहुत आती है, तुतलाहट की मीठी बातें।
दिन पहाड सा कटता बोझिल सी लगती हैं रातें ॥

तुमको पाकर भूल गई थी, स्वप्न सौख्य के सारे।
कहाँ चल दिये मुझे छोडकर मेर राजदुलारे ॥

सूख गई है कुछ दिन से, मेरे उपवन की क्यारी।
एक फूल के बिना उजड सी गई आज फुलवारी ॥

सुनती हूँ जब भी कोयल का मीठा मीठा गाना।
याद बहुत आती किलकारी, हँसकर दौड लगाना ॥

कहाँ विलीन हो गये शून्य मे मीठे बोल तुम्हारे।
कहा चल दिये मुझे छोडकर मेरे राजदुलारे ॥

किस निर्दय ने किया तुम्हारे ऊपर जादू टौना।
भीगा ही रह गया दूध मे आचल का हर कौना ॥

रोते खेल खिलौने तुम बिन, सूनी घर की पौरी।
अपने आप हिला करती अब भी पलने की डोरी ॥

धूल धूसरित याद बहुत आते हैं पाव तुम्हारे।
कहाँ चल दिये मुझे छोडकर मेरे राजदुलारे ।।

सोचा था जब बढ जायेगी थोडी उम्र तुम्हारी।
आयेगी फिर दूर देश से कोई राजकुमारी ।।

फूली नही समाऊँगी मैं दूल्हा तुम्हें बनाकर ।
सजा देखकर तुम्ह अश्व पर होगा दीन दिवाकर ।।

साहस क्या होगा चदा का तेरी ओर निहारे।
कहा चल दिये मुझे छोडकर मेरे राजदुलारे ।।

नही चाहती तुम बिन जीना, मैं जीवन से हारी।
क्यो न तुम्ह लग गई उमरिया, मेरी सारी सारी ।।

उठा क्यो नही लिया मुझे हो तुमने हाय विधाता।
कधा मुझे लगा दत तो जनम सफल हो जाता ।।

मन मे ही रह गई मल्गी सोकर गोद तुम्हारे।
कहा चल दिये मुझे छोडकर मेरे पप्पू प्यारे ।।

एक छोटे से प्रेमाङ्कन सहित
त्रिलोक गुप्ता

अनुक्रमणिका

भूमिका

यद्यपि भारतवर्ष म रामकथा का प्रचार प्रसार ई० पू० से ही था, तथापि बौद्ध धम में बोधिसत्व के रूप मे जैन धम मे अष्टमबलदेव के रूप म और ब्राह्मण धम मे विष्णु के अवतार के रूप मे राम उस काल से ही सवमान्य एव पूजित थे, यद्यपि हिन्दी साहित्य के प्रादुर्भाव स बहुत पूर्व भारतीय संस्कृति राममय हो चुकी थी तथापि हिन्दी म रामकथा के प्रथम श्रेष्ठ प्रणेता तथा राम के मर्यादापुरुषोत्तम रूप के प्रथम महान् गायक सूर ही कहे जा सकते हैं।

सूरसागर नवम् स्कन्ध के बालकाड से लेकर उत्तरकाड तक निहित केवल १५७ गेय पदों मे सूर ने एक ओर गाहस्थ्य जीवन के समस्त प्रमुख रूपों की झाकी प्रस्तुत की है, तो दूसरी ओर रामकथा के प्राय सभी मार्मिक प्रसगो को अपनी हृदयानुभूति के रस व रङ्ग म डुबोकर चित्रित किया है। सूरसागर के दशम स्कन्ध मे वर्णित कृष्ण लीला के अतिरिक्त सूर का मन यदि कहीं रमा है उनकी प्रतिभा का चमत्कार यदि कहीं दृष्टिगोचर होकर होता है, तो वह नवम स्कन्ध म वर्णित राम कथा मे ही। श्रीमद्भागवत की रामकथा से भी यह अधिक भावपूर्ण है। सूर-सारावली की रामकथा तो सूरसागर की कथा से भी अधिक विस्तृत एव व्यवस्थित है। यहाँ सूर रामकथा को कृष्णकथा के समकक्ष एक निश्चित रूप देने से जान पडते हैं।

सूर सारावली म सूरदास कहते हैं—"रामचरित सुखसार से तीनो लोक परिपूर्ण हो गये, शत कोटि रामायण लिखी गई तब भी पार नही पाया वशिष्ठ ने रामचन्द्र से रामायण कही, कागभुसुण्ड ने गरुण से रामचरित कहा तथा सब वे शास्त्रो ने रामचन्द्र यशसार कहा। अब लघुमति दुबल बाल सूर निज रसना

का पालन करने तथा भवजाल काटने के निमित्त में रामयश का गान करता है।

सूर राम और कृष्ण में अन्तर नहीं देखते। त्रेता में जो राम था वही द्वापर में कृष्ण हुआ। माता यशोदा रामकथा गा गाकर बालकृष्ण को सुलाने का उपक्रम कर रही हैं सीता-हरण प्रसङ्ग आते ही कृष्ण चौंककर उठ बैठते हैं और लक्ष्मण को पुकार कर धनुष बाण माँगने लगते हैं। यह देख माता यशोदा भ्रम में पड़ जाती है। सूरदास के ही शब्दों में—

रावण हरण कर्यो सीता को,
सुनि करुणामय नींद बिसारी।
सूर स्याम कर उठे चाप को,
लछिमन देहु जननि भ्रम भारी॥

सूरसागर में सूर ने अनेक स्थलों पर राम और कृष्ण को एक ही मानकर युगपद स्तुति की है। यथा—

जय माधव गोविन्द मुकुन्द हरि।
कृपासिन्धु कल्याण कंस अरि॥
प्रणत पाल केशव कमलापति।
कृष्ण कमल लोचन अनन्य गति॥
श्री रामचन्द्र राजीव नयनवर।
शरण साधु श्रीपति सारंगधर॥
खर दूषन त्रिशिरा शिर खण्डन।
चरण चिन्ह दण्डक भुव मण्डन॥
रघुपति प्रबल पिनाक बिभञ्जन।
जगहित जनकसुता मनरञ्जन॥
गोकुलपति गिरिधर गुन सागर।
गोपी रमन रास रतिनागर॥
करुणामय कपि-कुल हितकारी।
बालि विरोध कपट - मृगहारी॥

राम और कृष्ण की भाँति सूर सीता और राधा में भी अभेद देखते हैं। सूरसागर के एक पद में वह लिखते हैं—"राधे, तू वही तो सीता है, जिसे राम ने समुद्र पर सेतु बाँधकर और रावण जैसे दुर्मतीय शत्रु को पराजित करके पुनः प्राप्त किया था।"

'समुझि री नाहिन नई सगाई।
सुनु राधे तोहि माधौ सो प्रीति सदा चलि आई।
सिंधु मथ्या सागर बल बाँध्यो रिपुरण जीत मिलाई।
अब सो त्रिभुवननाथ नेह बस बन बाँसुरी बजाई॥'

राम और कृष्ण दोनों के प्रति सूर के इस युगपद् समर्पण भाव की अभिव्यक्ति पर आश्चर्य प्रकट करते हुए प्रायः जिज्ञासा व्यक्त की जाती है कि दास्य भाव से राम के चरणों में अपने उद्धार की व्याकुल प्रार्थना करने वाले तथा "कै हमही कै तुम ही माधो अपुन भरोसे लरिहौं" कहकर सख्य भाव से कृष्ण को चुनौती देने वाले सूर क्या एक ही व्यक्ति थे? और यदि दोनों एक ही थे तो इन दोनों भावों की अभिव्यक्ति अर्थात् मर्यादा पुरुषोत्तम राम और रसेश्वर कृष्ण के प्रति अपनी भक्ति की अभिव्यक्ति क्या उन्होंने एक साथ ही की होगी? एक ओर मर्यादा पुरुषोत्तम राम हैं जो रावण से विकट संघर्ष के पश्चात् पुनः प्राप्त सीता को देख लोक-लज्जावश मुँह मोड़ लेते हैं—

देखत दरस राम मुख मोरयो,
सिया परी मुरझाइ।
सूरदास स्वामी तिहु पुर के,
जग उपहास डराइ॥

दूसरी ओर नटवर नागर कृष्ण हैं जिनकी मुरली ध्वनि, जिनका रूप सौंदर्य, जिनकी हर अदा लोक वेद कुल की मर्यादा का प्रतिपल छिन्न भिन्न करने पर उतारू है। सूर के ही शब्दों में—

जबहीं बन मुरली श्रवण परी।
चकृत भई सब गोप कन्या सब काम धाम बिसरी॥
कुल मर्यादा वेद की आज्ञा
रंचहु नाहिं डरी॥

× × ×

तना नद्यो न मान मरो,
लोक वेद कुल कानि न मान ।
आते ही रहैं ओरो ॥

यह मर्यादा बद्धता और यह सब प्रकार की मर्यादाओं से मुक्ति—ये दोनो प्रकार की साधनायें क्या युगपद् सम्भव हैं ? लोक-वेद-मर्यादा के तटों को स्पर्श करते हुए बहने वाली रामकथा की तरंगिनी में 'पुष्टि मार्ग का जहाज' कैसे चला होगा ?

सीता तत्त्व और राधातत्त्व में भी मौलिक अन्तर है। लक्ष्मीतत्त्व से प्रभावित सीतातत्त्व में ऐश्वर्याधिष्ठानत्त्व है तो राधा में प्रेमाधिष्ठानत्त्व। राधा मधुर रस का घनीभूत विग्रह है, तो सीता सम्पर्क दास्य भाव की साकार कल्पना। दोनों को एक साथ ध्यानमूर्ति बना लेना, अन्य शब्दों में दास्य एवं भक्ति की युगपद् साधना करना क्या सम्भव है ?

सूर-साहित्य के सजग विद्यार्थियों के मन में प्राय ऐसे प्रश्न उठते रहते हैं।

महाप्रभु वल्लभाचार्य का मिलन सूर के साधनामय जीवन को दो भागों में विभक्त करता है। मिलन पूर्व जीवन में सूर दास्य भाव के उपासक थे और मिलन के पश्चात् सख्य एवं माधुर्य भाव के। सम्भव है सूरसागर नवम सर्ग की रामकथा उक्त मिलन से पूर्व लिखी गई हो। रामकथा में पात्रों का चरित्र चित्रण या कथा का साद्यन्त निर्वाह सूर का उद्देश्य नहीं जान पड़ता। उद्देश्य है राम रूप आराध्य की लीला के मार्मिक स्थलों में भावसमाधि लेना तथा विभिन्न पात्रों के माध्यम से अपनी भक्ति की अभिव्यक्ति करना। सूर के भरत लक्ष्मण, सीता मारुति, केवट आदि ही रामभक्त नहीं हैं रावण भी राम का प्रच्छन्न भक्त है। अशोक वाटिका में सीता को विविध प्रलोभन देने का नाटक करने के पश्चात् रावण सीता की रक्षिका निशिचरीसे कहता है— 'यदि सीता सत से विचले तो श्रीपति फिर और किसे सभाले ? मेरे जैसे मुग्ध पापी को क्रोध करके कौन तारे ? ये जननी हैं व रघुनन्दन प्रभु हैं और मैं उनका प्रतिहारी सेवक। सीता राम के सम्भ्रम बिना कौन पार उतारे ?

(सूरसागर पद ५२७ ना० प्र० स)

रावण को सत्परामर्श देने वाली सूरसागर की मन्दोदरी मानो कुपथगामी मन को समझाती हुई साधक की विवेक बुद्धि है और राक्षसों से घिरी हुई सीता मानो मनोविकारों से घिरी हुई साधक की आत्मा है, जो प्रियतम परमात्मा से मिलने के लिए तड़प तड़प उठती है।

यद्यपि वात्सल्य और शृङ्गार जैसे सामान्यत विरोधी रसों के युगपत् चित्रण में अद्भुत सफलता प्राप्त करने वाले महाकवि सूर के लिए ब्रह्म के मर्यादापुरुषोत्तम और रसेश्वर रूपों का एवं उनके प्रति समर्पण की भावना का युगपद् चित्रण असंभव नहीं कहा जा सकता तथापि यह तथ्य अधिक समीचीन जान पड़ता है कि रामभक्ति की विभिन्न भूमिकाओं में विचरण करने के पश्चात् ही सूर महाप्रभु वल्लभाचार्य की प्रेरणा से कृष्ण रूप के उपासक हुए होंगे, जहाँ उनके मन को परम विश्राम की उपलब्धि हुई होगी।

सूर द्वारा एक ही पद में राम और कृष्ण की युगपद स्तुति आचार्य वल्लभ के उस सिद्धांत के अनुरूप है जिसके अनुसार ब्रह्म के दो रूप हैं—ऐश्वर्य और माधुर्य। तदनुसार उसके अवतार के भी दो रूप हैं—मर्यादा रूप और रसेश्वर रूप। आचार्य वल्लभ ने यहाँ प्रकारांतर से मर्यादा पुरुषोत्तम राम और रसेश्वर कृष्ण की एकता का समर्थन ही किया है।

गोस्वामी तुलसीदास के सम्बन्ध में एक किंवदंती प्रचलित है कि मथुरा में भगवान कृष्ण को उन्होंने तब तक मस्तक नहीं झुकाया जब तक उनके हाथों में मुरली के स्थान पर धनुष बाण दृष्टिगोचर नहीं हुए। महापुरुषों के सम्बन्ध में ऐसी किंवदंतियाँ उनके प्रति समाज में श्रद्धा भक्ति की द्योतक अवश्य हैं लेकिन साथ ही उनमें युग की रुचि अरुचि, आग्रह और कभी कभी दुराग्रह का भी पुट रहता है। भोली भावुकता इनका समर्थन करती रहती है और कालांतर में इन पर भेद की दीवारें खड़ी होकर किसी भी धर्म को छोटे छोटे सम्प्रदायों में विभाजित कर देती हैं। तुलसी के सम्बन्ध में प्रचलित उक्त किंवदंती उनके तथाकथित प्रशंसकों की एक ही मनोवृत्ति की दो भिन्न अभिव्यक्तियाँ हैं। सूर और तुलसी के मन उस स्तर पर पहुँच चुके थे जहाँ भेद भाव समाप्त हो जाते हैं। तुलसी का कृष्ण-काव्य और सूर का राम-काव्य इसके सशक्त उदाहरण हैं।

श्री निनाक गुप्ता द्वारा सूर के रामकाव्य पर लिखा गया प्रस्तुत प्रबन्ध एक ओर हिन्दी समालोचना के क्षेत्र में इस विषय के अभाव की पूर्ति की ओर उठा हुआ प्रथम चरण है, तो दूसरी ओर साम्प्रदायिकता के एतत् सम्बन्धी भ्रमों तथा भेदों को निर्मूल करने में सहायक भी हो सकता है। श्री गुप्ता के विषय प्रतिपादन की शैली में सुव्यवस्था, सुरुचि एवं शास्त्रीयता निहित है। मेरा विश्वास है कि सूर-साहित्य के विद्यार्थियों तथा प्रेमियों को यह प्रबन्ध रुचिकर होगा तथा इस विषय में और अधिक चिन्तन मनन एवं लेखन की प्रेरणा मिलेगी।

म ाम
हिन्दी विभाग,
इन्दौर क्रिश्चियन कालेज
विजयादशमी १९६७

—रामचन्द्र विल्लारे
एम ए पी एच डी

श्री राम

सृजन-प्रेरणा

सृजन-प्रेरणा

सूर ने राम काव्य के अन्तर्गत राम का आविर्भाव दुष्टों का दलन करने और भक्तों का उद्धार करने के लिए प्रदर्शित किया है। राम की कथा उन्होंने श्रीमद् भागवत के द्वारा हृदयङ्गम की थी और उसी का आधार लेकर तथा उसमें नवीन उद्भावनाएँ एवं मौलिकताएँ तथा नये भाव चित्रों से सरोबार कर उसको प्रस्तुत किया है।

इनके काव्य की अन्तःप्रेरणा के सम्बन्ध में सामान्यतः, 'यह ही कहा जा सकता है कि भागवत से रामकथा का श्रवण कर, इनके हृदय में भी उसके भावपूर्ण स्थलों के प्रति उत्कंठा बढ़ी होगी। फलस्वरूप इन्होंने अन्य कथाओं के सदृश रामकथा पर भी अपने भाव प्रकट कर उत्कृष्ट काव्य की सर्जना की।

किंवदन्ती है कि सूरदासजी गोस्वामीजी से १४-१५ वर्ष बड़े थे। सूरदासजी अग्रज होते हुए भी गोस्वामीजी से मिलने चित्रकूट गये। इससे स्पष्ट होता है कि सूर और तुलसी एक दूसरे से प्रभावित अवश्य हुए होंगे और इसका परिणाम 'रामकथा' को प्रस्तुत करने में सहायक अवश्य रहा होगा।

अधिकांश भक्तियुग के कवियों, जिनमें सगुण धारा के कवि और भक्त सम्मिलित हैं, कोई भी एकाग्रही नहीं था। इनकी भक्ति के माध्यम में और इनकी उपासना में अपने युग तक विकसित सब उपास्य तत्त्व मिलते हैं। इन सब संतों और महात्माओं ने समाज में फैले असत्य और अपवित्रता का परित्याग कर सत्य और पवित्रता का संग्रह कर लिया था। इसी कारण इनके काव्य में समन्वय की भावना मिलती है। इसी पद्धति के आधार पर सूरदास की समन्वय साधना में कृष्ण की प्रधानता रहते हुए भी राम, विष्णु, शिव इत्यादि देवता संग्रहीत हो गये हैं।

इसके अतिरिक्त एक कारण यह भी हो सकता है जिसके फलस्वरूप सूर ने रामचरित सम्बन्धी पद लिखे हैं कृष्ण और राम दोनों का विष्णु का अवतार माना जाना। राम और कृष्ण दोनों विष्णु के ही अवतार माने जाते हैं। इसलिए राम और विष्णु को कृष्ण भक्ति शाखा में महत्व अधिक दिया गया।

अन्य देवी देवताओं की आराधना करने का कारण यह भी हो सकता जैसा कि डा० हरवंशलाल शर्मा ने 'सूर और उनका साहित्य' नामक पुस्तक पृष्ठ २७, २८ सूर साहित्य और ब्रज संस्कृति में लिखा है —

ब्रजभूमि अति विस्तृत है। यहाँ आज अनेक देवी-देवताओं की पूजा ए उपासना होती है। सूरकाल में भी श्रीकृष्ण के अतिरिक्त शिव, राम, सूर्य, चन्द्र पार्वती, शक्ति, इन्द्र, गोवर्धन गंगा यमुना, विष्णु, ब्रह्मा, गणेश, कुबेर आदि अने देवी देवताओं की भी पूजा उपासना समय समय पर होती थी। इनमें से अनेक क जन्म, विवाह आदि विविध संस्कारों पर आह्वान किया जाता था।

इसके नीचे वे फिर लिखते हैं—रामभक्ति की चर्चा सूरदासजी ने क स्थानों पर की है। उनके सूरसागर में रामचरित नाम से एक पृथक अंग भी जिसमें रामावतार से लेकर अंत तक की सम्पूर्ण कथा वर्णित है। इससे तो यह प्रमाणित होता है कि उस समय राम की उपासना का ब्रज में यथेष्ट प्रचार था।

वस्तुतः राम सम्बन्धी पदों की रचना उन्होंने एक परम्परा का निर्वाह कर और अपने समय में प्रचलित राम शिव, कृष्ण इन तीनों प्रमुख शक्तियों को एक ई 'ईश्वर का रूप और दूसरे का पूरक बताकर बहुत समय से चले आते हुए इन देवताओं के उपासकों विशेष रूप से वैष्णवों और शैवों के झगड़ों का अन्त करने के लिये की। तुलसीदासजी ने भी 'कृष्ण गीतावली' में कृष्ण की बाल सुलभ चेष्टाओं, चरित्र और स्वभाव का मोहक और आकर्षक वर्णन कर एवं स्वयं राम से 'शिवद्रोही मम दास दास कहावा, सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा' कहलाकर इसका अनुसरण मात्र ही किया है।

प्रस्तावना

जिस प्रकार भारत के महान् व्यक्तियों और लेखकों का जीवन तमसावृत रहा है, उनका रचनायें यशोलिप्सा आदि ऐषणाओं से दूर रहकर स्वान्त सुखाय ही निर्मित हुई हैं उसी प्रकार सूर का जीवन और उनके द्वारा सुरचित रामकाव्य भी जीवन की अस्पष्ट प्रतिच्छाया के रूप में अछूता सा पड़ा हुआ है।

आज उर्मिला विषयक उदासीनता की भांति सूर द्वारा रचित राम का यशोगान जो शृंखला में बंधा हुआ होते हुए भी सामान्य जन जीवन से बहुत दूर है, इसी का एक उदाहरण मात्र है।

सूर और रामकाव्य, इस वाक्यांश को सुनकर ही लोग आश्चर्य करने लगते हैं और इस अटपटे सम्बन्ध पर कुछ जानने को आतुर हो उठते हैं। इसका प्रमुख कारण यही है कि सूरदास कृष्ण के अनन्य भक्त थे उन्होंने कृष्ण के यशोगान में ही अपनी आयु का अधिकांश भाग व्यतीत किया। इसके अतिरिक्त उनके राम सम्बन्धी पद जन समाज में नाम मात्र को भी प्रचलित नहीं हैं। इसलिये अगर इस अटपटे सम्बन्ध पर जन साधारण को आश्चर्य हो तो यह कोई नई बात नहीं है।

किन्तु जिस प्रकार उर्मिला का स्थान, उसका आदर्श, उसका त्याग जब जन साधारण के सम्मुख आया कवियों और लेखकों ने उसके प्रति अपनी संवेदना प्रकट की तो वह आज गौरव गरिमा से अलंकृत हो जन मानस के हृदय कमल पर प्रतिष्ठित होकर एक आदर्श की वस्तु बन बैठा है। उसी तरह सूर द्वारा रचित राम के पद जो स्वयं में अद्भुत सौन्दर्य के आगार हैं, जिनमें सूर के हृदय की मृदुल तरंग के साथ करुणा का स्रोत छिपा हुआ है, जिनका काव्य वैभव उत्कृष्टता की सीमा पार करने पर तुला हुआ है। किसी दिन प्रकाश में आने पर जन मानस के गले का कण्ठहार बन जायेगा।

मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत' की उर्मिला के सदृश, सूर का रामकाव्य भी कभी अवश्य प्रकाश में आयेगा जब सूर के काव्य समुद्र का मन्थन, किसी कुशल आलोचक मन्थनकार द्वारा किया जावेगा तब उसमें से अमूल्य अमृत के सदृश सूर का रामकाव्य निःसृत होकर जन साधारण को अपनी ओर लालायित

वास्तव में राम कृष्ण के सदृश निर्मोही नहीं थे। वे जहाँ तक और आदर्श का निर्वाह करते हुए, रावण जैसे अत्याचारी का बध कर, सीता के लिये अगाध और विस्तृत सागर का भी 'बाँध' कर देते हैं, वहाँ दूसरी ओर अपनी पत्नी एवं प्रेयसी के लिये अनन्य प्रेम भाव प्रकट कर अपने असीम प्रेम को चरितार्थ कर देते हैं। इसीलिये गोपियों के सम्मुख उनका प्रेम कृष्ण के प्रेमोदय से उच्च कोटि का है।

इतना सब कुछ होते हुए भी 'राम' को हम सूर का आराध्य नहीं मान सकते। उनका हृदय जितना कृष्ण के यशोगान में रमा उतना हृदय भी न जितने स्वर और राग कृष्ण की आराधना में निकाले और उनके मन मन्दिर के कपाट जितने कृष्ण के आगमन की उत्कण्ठा में खुले रहे उतने अन्य देवी देवताओं के लिये नहीं।

सूर के रामकाव्य में जहाँ एक ओर भावपक्ष की प्रबलता है संयोग और वियोग का उत्कृष्ट चित्रण है अनुभावों की तीव्र अभिव्यञ्जना है, सूक्ष्मतर भावों का गूढ़ चिन्तन है और मार्मिक स्थलों की पहिचान है वहाँ दूसरी ओर कलापक्ष की उत्कृष्टता एवं सरसता भी मन कचोट लेती है।

रामकाव्य की परम्परा

रामकाव्य की परम्परा

पृथ्वी के पूर्वार्द्ध एव भारत के जन जीवन को 'राम' शब्द शताब्दियो स आलोडित करता चला आ रहा है। भारत के जन जन के मन म तो 'राम' शब्द इस गहराई से पठ चुका है कि राम के बिना भारत की सस्कृति, एव धम की कल्पना भी नही की जा सकती। 'राम' शताब्दियो से भारत के बहुजन के श्रद्धा एव भक्ति के केन्द्र हैं। राम का आदश ही यहा के जन-जन का साध्य है। राम नाम की सुधा ने भारत का किस प्रकार अपने पतन के काल म भी जीवित बनाये रखा एव उसको पुन उन्नति की ओर उन्मुख किया साहित्य एव इतिहास के विद्यार्थी इसे भली भाँति जानते हैं। राम' शब्द ही भारत की अनेकानेक धार्मिक एव सुधारा का जनक रहा है।

विभिन्न चिन्तको ज्ञानियो और भक्तो के द्वारा 'राम' के विविध अथ प्रस्तुत किये गये हैं। अथर्ववेदीय रामपूर्वतापनीय उपनिषद् इस शब्द की व्युत्पत्ति और अथ विविध रूपों में प्रस्तुत करता है। सस्कृत की 'रा धातु का अथ दान देना होता है। विश्व के साधु मनुष्यो का हर प्रकार की पीडा स त्राण देना हा राम का शील स्वभाव है। सस्कृत की ही एक अन्य धातु 'राज' चमकने के अथ म मिलती है। राम शक्तिशाली एव सौन्दय के पुजीभूत स्वरूप थे। सस्कृत की इन्ही दो धातुओ से 'राम' का 'रा' लिया गया है। 'मही' (पृथ्वी) पर राम की लीला का प्रसरण हुआ है। अत 'मही का म ही 'राम का म' है।

अभिराम शब्द से भी राम की व्युत्पत्ति मानी जाती है। यह शब्द सौन्दय व्यजक है।

राक्षसा के लिये राम साक्षात मरण स्वरूप ही थे अत राक्षस के रा एव मरण के 'म' से भी राम शब्द की व्युत्पत्ति उक्त उपनिषद बतलाता है।

राम के मर्यादा पुरुषोत्तम रूप को ध्यान म रखकर, उक्त उपनिषद एक अन्य व्युत्पत्ति देता है। जिस प्रकार राहु ने मनसिज अर्थात् चन्द्रमा को पराजित किया उसी प्रकार राम ने मनसिज अर्थात् काम को पराजित किया। अत राहु क रा और मनसिज क 'म से राम शब्द बना।

यही उपनिषद् 'राम' शब्द की एक मानसिक व्युत्पत्ति भी देता है जिस नारवत धान द स्वरूप समग्र विश्व चेतना में मैं द एव सनातन ब्रह्म के ध्यान म मग्न हो योगी परमानन्द म लीन हो जाते हैं, रमण करते हैं, वही राम हैं, यह रम सनना धातु से राम शब्द की व्युत्पत्ति दर्शाई गई है।१

वदिक साहित्य में दाशरथि राम, परशुराम एव बलराम का कहीं भी वर्णन नहीं है, फिर भी राम शब्द एव कुछ राम नामक व्यक्तियों का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है। तैतरीय आरण्यक के एक श्लोक म 'राम' पुत्र के अर्थ म एक 'रामा' पत्नी, स्त्री या वश्या के अर्थ म प्रयुक्त हुआ है। सायण अपने भाष्य में 'राम' का अर्थ 'रमणाय पुत्र' करते हैं।

ऋग्वेद म 'राम' का प्रथम प्रतापी यजमानों के साथ उल्लेख हुआ है जिससे सर्वत्र यही प्रतीत होता है कि 'राम' नामक कोई राजा हुआ होगा। इसके अतिरिक्त ऐतरेय ब्राह्मण में 'राम मार्गवेय' शतपथ ब्राह्मण में 'राम क्रातुजातेय' का उल्लेख मिलता है किन्तु इसका कोई सम्बन्ध रामायण की कथा से नितान्त असम्भव है।

वाल्मीकि रामायण एव महाभारत के समय से ही परशुराम, बलराम आदि की कथाएँ प्रचलित थीं, अतः रामायण के नायक को निर्दिष्ट करने के लिए किसी विशेषण की आवश्यकता थी। महाभारत तथा रामायण म 'दाशरथि राम' का प्रयोग हुआ परन्तु आगे चलकर 'रामचन्द्र' का नाम चल पड़ा। आगे चलकर तो यही नाम सर्वप्रिय भी हुआ किन्तु दाशरथि राम को रामचन्द्र की उपाधि कब मिली? इस सम्बन्ध में डा० वेबर ने कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय ब्राह्मण म उल्लिखित सीता सावित्री वृत्तान्त का सहारा लिया किन्तु फादर कामिल बुल्के ने डा० वेबर की कल्पना को असगत बताते हुए रामचन्द्र नाम का कारण वाल्मीकि रामायण म ही ढूँढा।

वाल्मीकि ने राम के सौन्दर्य एव लोकप्रियता को अभिव्यजना करने के लिए कई स्थलों पर राम की तुलना चन्द्रमा से की है। राम रावण युद्ध के एक प्रसग म रामचन्द्र का रावण राहु से ग्रस्त देखकर देवता, वानर आदि घबड़ाते हैं ऐसा रूपक वाल्मीकि ने बाँधा है। यह सम्भव ही प्रतीत होता है कि आगे चलकर 'रामचन्द्र' रूपक न रहकर साधारण व्यक्तिवाचक संज्ञा के रूप में चल पड़ा और आज तक चला आ रहा है।

---

१ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरजन पाडेय पृष्ठ १ से ३

रामाराधना का प्रारम्भ एव विकास

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि राम' की आराधना कब से आरम्भ हुई ? इस प्रश्न के उत्तर मे एक निश्चित काल विशेष बतलाना, अति दुष्कर ही नहा अपितु असम्भव ही है। निश्चय ही रामोपासना अवतारवाद की स्थापना स साथ साथ या कालान्तर से प्रारम्भ हुई एव अवतारवाद की व्यापकता के बढने क साथ ही साथ इस भक्ति भावना का भी विकास हुआ।

भारतीय भक्ति माग के बीज वेदो मे ही दिखाई पडते हैं, जो राम भक्ति काल स शत ाब्दियो पूव का समय था। यज्ञ प्रधान ब्राह्मण धम एव कमकाण्ड की प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न बौद्ध एव जन धर्मों की भांति ही भागवद धम का उदय हुआ जिसम भक्तिमाग पूणत विकसित हुआ। बाद मे ब्राह्मण एव भागवत धर्मों के समन्वय से वष्णव धम प्रचलित हुआ जिसमें वदिक देवता विष्णु और भागवतो के आराध्य वासुदेव कृष्ण एक माने गये। अवतारवाद की भावना सव प्रथम शतपथ ब्राह्मण म मिलती है किन्तु ब्राह्मण साहित्य मे अवतारवाद की विद्यमानता होन पर भी उसका कोई महत्व नहीं था। आरम्भ मे-विष्णु-एव कृष्ण म कोई सम्बन्ध नहीं था। डा० हेमचन्द्रराय चौधरी का मत है कि वासुदेव कृष्ण और विष्णु की अभिन्नता तीसरी शती ई० पू० में प्रारम्भ हुई होगी।

विष्णु के अ य अवतार भी माने जाने लगे जिनम रामावतार सबसे महत्वपूण एव प्रमुख हैं। महाभारत और वाल्मीकि रामायण के प्रक्षिप्त अंशों म रामावतार का का उल्लेख है कि त प्राचीन पुराणो म रामभक्ति का काई उ लेख नही मिलता। अत जसा कि फादर बुल्क का मत है रामभक्ति तथा रामपूजा रामावतार की भावना का स्थापना क बहुत समय उपरा त आरम्भ हुइ। डा० रामकृष्ण भाडार कर का मत है कि यद्यपि ईसवी सन् के प्रारम्भ से राम विष्णु के अवतार माने गये थ, किन्तु उनकी विशेष प्रतिष्ठा ११ वीं शताब्दी के लगभग ही प्रचलित हुई। परन्तु रामभक्ति क बीज दक्षिण भारत क तमिल आलवारो की रचना 'नालियर प्रबन्ध में प्राप्त होते है। इसम कृष्ण को अधिक महत्व दिया गया है, किन्तु राम का भी निर तर उल्लख हुआ है। इस प्रबन्ध का सक्लन आठवी शती ई० म हुआ था। नवी शती ई० क कुलशेखर अलवार की रचनाओ म रामभक्ति का प्रौढ़ रूप दीख पडता है।

इसके अतिरिक्त वैष्णव संहिताओं तथा उपनिषदों में रामभक्ति तथा राम पूजा का शास्त्रीय विवेचन प्राप्त होता है। इस प्रकार के ग्रंथों की रचना विशेष रूप से रामानुज सम्प्रदाय में हुई। इनमें विशेष उल्लेखनीय राम तापनीय उपनिषद् का प्राचीनतम काल डा० वेबर के मतानुसार ११ वीं शती ई० है। उसी समय से राम भक्ति सम्बन्धी साहित्य का निर्माण होने लगा। रामोपासना के विषय में भी अनेक रचनायें हुई। रामानन्द ने रामभक्ति के प्रसार के लिये अत्यधिक कार्य किया। रामानन्द का सम्बन्ध प्रायः रामानुजाचार्य के सम्प्रदाय से जोड़ा जाता है। इससे इतना तो स्पष्ट है कि रामानुज सम्प्रदाय के साथ ही राम भक्ति का जन साधारण में प्रचार होने लगा। आगे चलकर इस रामभक्ति को तुलसीदासजी ने बड़ा ही काव्यात्मक एवं हृदयग्राही रूप दिया।

तुलसीदासजी के पश्चात् राधाकृष्ण लीला का प्रभाव रामभक्ति पर पड़ा, परिणामस्वरूप राम सीता युग्म भक्ति का प्रवर्तन हुआ।

राम काव्य का विकास

हिन्दी में रामकाव्य के विकास पर विचार करने से पूर्व संस्कृत के रामकाव्य पर एक सरसरी दृष्टि डालना अनुचित न होगा। संस्कृत में सर्वप्रथम महर्षि वाल्मीकि कृत 'आदि रामायण' उल्लेखनीय है जो बाद के रामकथा साहित्य को अत्यंत प्रभावित ही नहीं किये हुए है वरन् एक दृष्टि से तो उनकी जननी सी है। संस्कृत ने अनेक महाकाव्य, खण्डकाव्य, चित्रकाव्य आदि रामकथा को ही आधार बनाकर लिखे गये जिनमें से कुछ मुख्य काव्यों का नाम लेना यहाँ पर्याप्त होगा।

कालिदास कृत रघुवंश की रचना चौथी शती ई० के लगभग हुई। इसकी कथा में वाल्मीकि कृत रामायण से कोई विशेष भिन्नता नहीं है। पाँचवीं या छठी शती के आस पास भी महाराष्ट्री प्राकृत में लिखा एक काव्य 'रावण वध' अथवा सेतुबंध प्राप्त होता है। इसके विषय में एक धारणा पाई जाती है कि यह कालिदास द्वारा ही लिखी गई है जो कि भ्रामक है। इसके भी कथानक में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता।

'भट्टिकाव्य अथवा रावणवध' छठी शताब्दी ई० के आसपास बल्लभ में रचित है। वाल्मीकि कृत रामायण के प्रथम ८ सर्गों की कथा इस किंचित

परिवर्तन के साथ वर्णित है। नवीं शती के पूर्वार्द्ध मे अभिनन्द न 'रामचरित की रचना की जिसे भीम नामक कवि ने ४ सर्गों का एक परिशिष्ट लिख कर पूरा किया। क्षेमेन्द्र ने १०३७ मे 'रामायणमंजरी' तथा १०६६ मे दशावतार चरितम् की रचना की। 'दशावतार चरितम् मे राम कथा नवीन रूप म प्रस्तुत की गई। 'उदार राघव' की रचना १४ वी शती मे साकल्यमल्ल ने की। इसके अतिरिक्त १७ वी शती के अद्वैत कवि कृत 'रामलिंगामृत' चक्रकवि कृत जानकी परिणय एव १७५० ई० म रचित मोहन स्वामी कृत 'राम रहस्य अथवा 'रामचरित का भी उल्लेख मिलता है। साथ ही १२ वी शती से लेकर १८ वी शती तक रामकथा स सबद्ध अनेक श्लेष काव्य विलोम काव्य, चित्र काव्य एव खण्ड काव्य रचे गये। जिनम १२ वी शती मे सध्याकर नन्दी द्वारा रचित रामचरित उल्लेखनीय है।

सस्कृत के अतिरिक्त भारत की अन्य अनेकानेक भाषाओ तथा वृहत्तर भारत एव पूर्वीय देशो म भी राम कथा से सबद्ध काव्य एव नाटकादि की रचना बहुतायत से हुई हैं। चीन तिब्बत इडोनेशिया श्याम बह्मा आदि देशो मे भी राम की कथा प्रचलित अत्यधिक हुई। तिब्बती रामायण चीन का दशरथ कथानम् इडोनेशिया का 'रामायण काकाविन' जावा का सेरतराम' कम्बोडिया का 'रेआम केर' श्याम का 'रामकियेन तथा ब्रह्मा का यामप्व' नामक ग्रथ रामकथा के ही देश, धर्म कालानुकूल रूप हैं। इस प्रकार रामकथा एशिया के विभिन्न देशो म व्याप्त हो गई थी। साथ ही राम के चरित्र और कथा ने बडे व्यापक रूप से काव्य का प्रेरणा दी।

हिन्दी म रामकाव्य की परम्परा में सब प्रथम सवत १३४२ म रचित भूपति कृत रामचरित रामायण का उल्लेख मात्र १९०६ की खोज रिपोर्ट म मिलता है। अन्य विवरण उपलब्ध नही है। तुलसीदास जी क समकालीन मुनिलाल कवि ने रामप्रकाश' नामक काव्य म रीति शास्त्रीय आधार पर रामकाव्य लिखा। १

भारतीय भाषाओ म तामिल की कम्बन कृत रामायण एव बगला की कृत्तिवासी रामायण विशेष उल्लेखनीय है।'

हिन्दी साहित्य म रामकाव्य का सर्वाधिक जगमगाता हुआ रत्न है, गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस, जो शताब्दियो से भारत के जन-जन का

कठहार बना हुआ है, किन्तु विकास की कड़ी म 'सूर' गोस्वामी तुलसीदासजी की अपेक्षा पहले पड़ते हैं। रामचरित मानस की रचना स० १६३१ में प्रारम्भ हुई थी, जबकि सूर का निधन सवत् १६२० के आस-पास माना जाता है। १

यहाँ तक कि रामाज्ञा प्रश्न की रचना भी स० १६२१ म हुई है। २

राम काव्य के सब प्रमुख गायक हैं गोस्वामी तुलसीदासजी। १७ वीं शती के पूर्वार्द्ध मे गोस्वामी जी न रामकथा को भाषा काव्य म परमोज्ज्वल रूप म प्रस्तुत किया। मां शारदा क कठहार म भाषा' का सब श्रेष्ठ रत्न रामचरित मानस' गोस्वामी जी ने ही पिरोया, जिसकी आभा आज भी ज्यो की त्यो विद्यमान है। गोस्वामीजी के समय काव्य की भाषा के दो रूप प्रचलित चल आ रहे थे, ब्रज और अवधी। गोस्वामी जी का दोनों पर ही समान एव पूर्ण अधिकार था। दोनो ही म उन्होंने समान अधिकार के साथ रचनाए की। ३

गोस्वामी तुलसीदास जी न रामचरित मानस का नाना पुराण निगमागम समतम् लिखा है तथा अन्य अनेक विद्वानो और लेखको ने राम कथा के आधार मूल ग्रन्थो का उल्लेख किया है जिन्हें देखकर यह धारणा हो सकती है कि तुलसीदास ने अपने पूरवर्ती राम चरित सम्बन्धी साहित्य से अपने रामचरित को सकलित किया। परन्तु जब हम पूरवर्ती रामचरित साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो यह धारणा स्पष्ट हो जाती है कि तुलसी ने राम के इस रूप, चरित्र और आख्यान के निर्माण म बड़ा परिश्रम किया है। राम का, विविध गुणों शक्ति, शील सौन्दय से युक्त जो पूर्ण व्यक्तित्व मानस मे देखने को मिलता है वह पूरवर्ती किसी भी एक काव्य में नही मिलता। समस्त रचनाओ को पढ कर भी हम राम के सम्बन्ध म यह धारणा नही बना पाते जो तुलसी के मानस द्वारा बनती है। अत युग युग को प्रभावित करने वाली कथा की रचना कर राम के व्यक्तित्व को इतना महान उत्कर्ष और पूर्णता प्रदान करने मे तुलसी को बहुत बडा श्रेय प्राप्त है। ४

---

१ रामभक्ति शाला रामनिरजन पाडेय पष्ठ ३६६

२ मानस की रामकथा परशुराम चतुर्वेदी पृष्ठ १४७

३ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचाय रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ १२६

४ तुलसी रसायन डा० भागीरथ मिश्र पष्ठ ६५

रामचरित मानस तुलसीदास जी का एक अनुपम ग्रन्थ है। रचना कौशल, प्रबन्ध पटुता, सहृदयता आदि सब गुणा का समाहार उक्त ग्रन्थ मे मिलता है।

इसम कथा काव्य के सभी अवयवो का उचित समीकरण हैं। वस्तु व्यापार वर्णन, भावव्यजना एव सवाद तो अपूर्व हैं ही, साथ ही इतिवृत्त की शृ खला भी कही नही टूटती। १

कथा के मार्मिक स्थलो की पहचान मे भी तुलसीदास जी बेजोड हैं। उनकी भाषा भी प्रसगानुकूल चलती है। विद्वानो की सस्कृत मिश्रित भाषा का प्रयोग कहाँ हो और ठेठ बोली का कहा, इस बात का उन्होने पूरा ध्यान रक्खा है। शृ गार रस का शिष्ट मर्यादा के भीतर बहुत ही व्यञ्जक वर्णन तुलसीदास जी की एक अन्यतम विशेषता है। २

तुलसीदास जी विशिष्टाद्वैत पद्धति की उपासना का समर्थन करते हैं। वे जग को केवल राममय न कहकर 'सियाराम मय' कहते हैं, किन्तु तुलसीदास जी के कवि रूप की श्रेष्ठता का प्रमाण केवल रामचरित मानस ही नही, उनके अन्य ग्रन्थ भी हैं। मानस' तो अन्यतम ग्रन्थ है ही किन्तु उनकी अन्य रचनाए भी कम मोहक नही हैं।

श्रीकृष्ण गीतावली मे वात्सल्य भक्ति के सुन्दर चित्र गोस्वामी जी ने अकित किये हैं। इसमे शृ गार भक्ति का माधुर्य भाव भी अत्यन्त मोहक है जिनम शृ गाराद्वैत के विकास को चित्रित किया गया है। रामलला नहछू' म जीवन के सब तरह के आनन्दोत्सवो को राममय बना देने के लिए गोस्वामी जी न अपनी भक्ति की धारा से जीवन के सब पाधो को सीच दिया है। गोस्वामी जी न शील के रूप म सगुण, निर्गुण का विशिष्टाद्वैती साधना, वैराग्य सदीपनी' म की है। सात काण्डो म विभक्त बरवै रामायण म बडे ही कलात्मक एव हृदयस्पर्शी रूप म राम सीता के जीवन की घटनाओ का वर्णन है किन्तु इसम प्रबन्धात्मकता का अभाव है।

रामकाव्य के सब श्रेष्ठ प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास जी की रचनाओ का विवेचन अभीष्ट नहा है तथापि रामकाव्य पर विचार करते समय तुलसीदास जी का इतना परिचय यथेष्ट होगा। उनकी सी साहित्य मर्मज्ञता भावुकता रचना

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य शुक्ल पृष्ठ १३१

२ वही पृष्ठ १३१

नपुण्य अलकार-योजना, भाषा की स्वच्छता, सरस व्यजना अन्यत्र प्राय दुर्लभ है।

रामकाव्य के विकास की कड़ी में तीसरा नाम स्वामी अग्रदास जी का है। ये तुलसीदास जी के समकालीन थे इनकी चार पुस्तकों का पता चलता है।[१]

स्वामी अग्रदास जी के शिष्य प्रसिद्ध ग्रथ 'भक्तमाल' के रचयिता नाभा दास जी ने भी रामभक्ति सम्बन्धी कविता की। इन्होने २ अष्टयाम बनाये एक ब्रज मे तथा एक पद्य मे। इनका रामचरित सम्बन्धी पदो का एक छोटा सग्रह भी है। ये तुलसीदास जी की मृत्यु के भी बहुत बाद तक जीवित थे।[२]

सवत १६६७ मे प्राणचन्द चौहान ने रामायण महानाटक लिखा। हृदयराम ने सस्कृत 'हनुमन्नाटक' के ढग पर भाषा 'हनुमन्नाटक' सवत् १६८० मे लिखा।

आचार्य केशव, अब्दुर्रहीम खानखाना एव सेनापति जो कि प्राय गोस्वामी जी के समकालीन थे, भी रामकाव्य के प्रमुख गायकों मे से हैं। केशवदास जी की 'रामचद्रिका' तो रामकाव्य के विकास की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

अभी तक चर्चित सभी कवि भक्त थे और उनकी रचनाए भी भक्ति के ही उद्गार हैं। इस भक्ति मार्ग से हट कर राम से सम्बन्धित काव्य रचना करने वालो म प्रमुख हैं आचार्य केशव इनके सोत ग्रथ हैं किन्तु 'केवल राम चन्द्रिका' ही राम से सम्बन्धित हैं इसके निर्माण म आचार्य केशव ने प्रसन्न राघव, 'हनुमन्नाटक' 'अनघराघव, 'कादम्बरी' तथा नैषध्य की बहुत सी उक्तियो का अनुवाद करके उपयोग किया है।[३]

केशवदास जी मूलत आचार्य थ। उनके ग्रथो के अध्ययन स स्पष्ट है कि उनके कवि पर उनका आचार्यत्व स्थान स्थान पर हावी हो गया है। स्वभावत ही उनकी अन्य रचनाओ के समान ही राम चन्द्रिका भी अलकार आदि काव्य के बाह्य उपादानों से परिपूर्ण है।

आचार्य शुक्ल का कथन है कि वे मुक्तक रचना के ही उपयुक्त थे, प्रबन्ध रचना के नही। प्रबन्ध पटुता उनम कुछ भी न थी। व इसके सम्बन्ध में तीन कारण देते हैं।

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य शुक्ल पृष्ठ ४

२ वही प्रकरण ४

३ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य शुक्ल पृष्ठ १६४ और राम भक्ति शाखा रा नि पृष्ठ ४२०

(१) सम्बन्ध निर्वाह का अभाव।

(२) कथा के गम्भीर और मार्मिक स्थलों की पहचान की अक्षमता, और

(३) दृश्यों की स्थानगत विशेषता का अभाव।१

मुगल शासन के साथ ही साथ धार्मिक समन्वय भी आरम्भ हुआ। इस ओर अकबर के प्रयत्न इतिहासप्रसिद्ध हैं। इसी समन्वयकी देन हैं,अब्दुलरहीम खानखाना। रहीम का झुकाव कृष्ण भक्ति की ओर अधिक था, किन्तु दुख निवारक, पतित तारक, शीलयुक्त आदर्श राम के भी उपासक थे। उनके अनेक दोहे रामभक्ति से ओत प्रोत हैं। रामकाव्य के रचिताओं मे निश्चय ही वे एक विशिष्ट स्थान के अधिकारी हैं।

रामकाव्य के रचिताओं मे एक अन्य श्रेष्ठ कवि हैं सेनापति। इनके 'कवित्त रत्नाकर' की चौथी और पाँचवी तरगें क्रम से रामायण वर्णन एवं राम रसायन वर्णन प्रस्तुत करती हैं। इनके अतिरिक्त पहली तरग 'श्लेष तरग' में भी राम सम्बन्धी सोलह कवित्त हैं। इन सभी कवित्तों में इनकी रामभक्ति की उन्मुक्त एवं अनुपम अभिव्यक्ति है। इन्होंने राम एव कृष्ण की अभेदोपासना की किन्तु इनके उपास्य मुख्यतः मर्यादा पुरुषोत्तम राम ही प्रतीत होते हैं। सेनापति की रामभक्ति से सम्बद्ध कविता पूर्णतः मौलिक है। जहां इनमे भावुकता कूट कूट कर भरी थी, वहीं इनकी रचनाओं मे चमत्कार भी देखते ही बनता है। इनकी कविता अत्यन्त ही मर्मस्पर्शी है। इनकी भाषा में ब्रजभाषा का स्वाभाविक माधुर्य है। भाषा पर इनका सा अधिकार एवं अनुप्रास तथा यमक का अत्यन्त उचित सुन्दरता के साथ प्रचुर प्रयोग अन्य कवियों में कम ही पाया जाता है। स्वतन्त्र रूप से प्रकृति का इतना सुन्दर चित्रण आधुनिक काल को छोड़कर हिन्दी में कभी नहीं हुआ, जितना सेनापति ने किया। इनके रामकाव्य के सम्बन्ध में एक उल्लेखनीय बात यह है कि सेनापति ने सच्ची सीता के हरण को स्वीकार नहीं किया। कवित्त रत्नाकर की चौथी तरग 'रामायण वर्णन' के कवित्त ३१ से स्पष्ट है कि रावण सीता के छाया शरीर का ही हरण कर सका। उक्त प्रसग सेनापति की मर्यादा वादिता एवं अपने उपास्य की मर्यादा के प्रति जागरुकता का परिचय अपने साथ ही देता है।

१६ वीं शती तक आते आते रामकाव्य पर भी अति शृंगारिकता का प्रभाव हुआ। 'स्वसुखी शाखा' के सस्थापक राम चरणदासजी रामकाव्य में शृंगारिकता

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य शुक्ल पृ० १६५

गे मुख्य प्रवत्तक थे। रामचरणदास जी बाबा रघुनाथदास, रीवा नरेश रघुराजसिंह आदि रामकाव्य के विकास के प्रथम चरण की अन्तिम कड़ियां थे।

इस शती में रामभक्ति में माधुर्यभाव की उपासना सर्वत्र बढ़ गई। राधा-कृष्ण के अनुकरण पर राम भक्ति भावना की काव्य में प्रमुखता स्थापित हुई। 'स्वसुखी' 'चितसुखी' और तत्सुखी सम्प्रदायों की स्थापना हुई। अष्टयाम उपासना पद्धति आरम्भ हुई। शृंगार भावना रामभक्ति पर हावी हो गई। आचार्य शुक्ल ने इन सम्प्रदायों के रामभक्ति साहित्य पर अश्लीलता का आरोप करते हुए इनकी भर्त्सना की है। १

वाल्मिकी के समय से चली आरही मर्यादा पुरुषोत्तम राम की उपासना में इस प्रकार की शृंगारिकता पर मर्यादा प्रेमियों का क्षोभ स्वाभाविक ही प्रतीत होता है। आचार्य शुक्ल का कथन है कि इन सम्प्रदायों में अनेक नवीन कल्पित ग्रंथों को प्राचीन बताकर प्रचलित किये गये हैं। २

रामचरणदासजी, युगलानन्यशरणजी, महात्मा बालअली कृपानिवास, स्वामी जनकराज किशोरीशरण जीवाराम श्रीराम वल्लभाशरण स्वामी रामचरणदास 'करुणा सिन्धु', महात्मा बनादास, श्रीरसरंग मणि जानाअली सहचरीजी रामसखे, रामप्रियाशरण प्रेमवली, काष्ठ जिह्वा स्वामी प्रेमलताजी, महाराजसिंह, पण्डित रामनारायणदास हरिहरप्रसाद कविराज लछिमन, नवलसिंह श्रीशरण,' युगलअली, सियाअली, श्याम सखे, महंत महावीरदास 'महाराजदास श्री सीतारामशरण 'शमनीला', वष्णवदास, रसदेव मन्नारीलाल वश्य महंत हरचरणदास, रामप्रिया रामलोटन मिश्र, प्रेम सखी, मोन्लताजी वैजनाथ कुरमी ठाकुर मथुराप्रसाद सिंह, कोविद कवि अम्बिकाप्रसाद देवज्ञ राम रसरंगमणि आदि रामभक्ति काव्य के शृंगारिक समुदाय के कवि हैं। ३

इनके अतिरिक्त भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पिता गिरधरदास ने भी राम से सम्बन्धित कतिपय ग्रन्थों का प्रणयन किया।

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य शुक्ल पृ० १४१

२ वही पृ० १४१

३ रामभक्ति शाखा रामनिरजन पाडेय प० ४७४ से ५१४

कविता म खडी बोली के प्रयोग एव आधुनिक युग के उत्कर्ष के साथ भक्ति काव्य की परम्परा एक दम ही समाप्त नही हो गई मद अवश्य ही पड गई। भक्ति का वह मानदण्ड भी न रह गया जो परम्परा से चला आरहा था। खडी बोली म भी भक्ति सम्बन्धिनी अनेक फुटकर रचनाऐ हुई और कुछ प्रबन्ध काव्य भी रचे गये। अपने नये परिप्रेक्ष्यो के कारण वे जन जीवन मे लोकप्रिय एव समादृत भी हुए।

आधुनिक युग म भी राम की कथा को लेकर कुछ रचनायें हुई हैं जिनमे विशेष प्रसिद्ध हैं, रामचरित उपाध्याय कृत 'रामचरित चिन्तामणी', हरिऔध कृत 'वदेही वनवास' और बल्देवप्रसाद मिश्र कृत 'साकेत सत' तथा मथिलीशरण गुप्त कृत पचवटी तथा 'कौशल किशोर'। १

इनमे से बाबू मथिलीशरणजी गुप्त द्वारा विरचित साकेत' अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साकेत के अतिरिक्त भी गुप्तजी ने राम सम्ब धी कवितायें, खण्डकाव्यादि रचे हैं। गुप्तजी राम के अनन्य भक्त हैं किन्तु उनका दृष्टिकोण चली आरही परम्परा से अत्यन्त भिन्न हैं। 'साकेत म उर्मिला को प्रधानता दी गइ है। इस काव्य म पूरे दो सर्गों का उर्मिला के विरह वणन म उपयोग किया गया है। इस वियोग वणन के गीतों में गुप्तजी ने प्राचीन पद्धति की आलकारिता एव चमत्कार तथा नई पद्धति की वेदना और लाक्षणिक वचित्र्य का अत्यन्त सुन्दर समन्वय किया है। सारी कथा साकेत मे ही केन्द्रित है। साकेत काव्य की प्रमुखतम विशेषता है, अत्यन्त उच्च भाव भूमि पर उर्मिला की वदना की व्यजना, प्रेम के प्रभाव से विरह म भी उर्मिला के हृदय म उदारता का ही प्रसार होता है। रामायण के भिन्न भिन्न पात्रो के परम्परा गत स्वरूपो म आधुनिक भावनाओं की प्रतिष्ठापना की गई है। पात्रों की स्वरूप विकृति का सम्पूण काव्य में आभास मात्र भी नही है। यहाँ तक कि कवि ककयी जस पात्र के प्रति भी पाठक की करुणा एव सहानुभूति को जाग्रत करके अत्यन्त तीव्र कर देता है। शोक सतप्ता ककयी का इतना अनुपम चित्र सम्पूण वाङमय मे अद्वितीय है।

गोस्वामी तुलसीदासजी से लेकर गुप्तजी तक चली आरही इस रामकाव्य की परम्परा अत्यन्त ही उज्जवल है। जिसमें भारत के जन मन की राम के प्रति निष्ठा की अत्यन्त ही सुन्दर अभिव्यजना हुई है। रामभक्ति के समानान्तर चलने वाली

---

१ तुलसी रसायन डा भागीरथ मिश्र पृ० ७२

कृष्ण भक्ति के अन्यतम गायक गोस्वामीजी से कुछ ही पूर्व 'सूर' ने भी श्रीमद्भागवत के आधार पर रचे गये 'सूरसागर' में रामकथा का गान किया है। काल क्रमानुसार 'सूर' ही भाषा मे रामकाव्य के प्रथम गायक ठहरते हैं।

श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध में राम की कथा कही गई है। जब वल्लभाचार्यजी के आदेशानुसार सूर ने 'सूरसागर' की रचना की तो अपने ग्रन्थ के नवम स्कन्ध में उन्होने भी रामकथा का वर्णन किया। सम्पूर्ण कथा उन्होने पदों में गाई है। इन पदों में कई स्थानों पर इतिवृतात्मकता भी आगई है किन्तु पदों की गय शैली के भावात्मक प्रवाह में सूर का भावुक हृदय भी कई स्थानों पर बह गया है। सूर ने रामकृष्णैक्य की मधुर साधना की है यद्यपि इस साधना मे कृष्ण ही प्रमुख हैं पर वे राम के ही दूसरे रूप हैं कोई अन्य नही। १

श्रीमद्भागवत की योजना का अनुसरण करते हुए सूरदासजी ने रामावतार का वर्णन किया है पर अन्यत्र भी उन्होंने राम को अपने हृदय से दूर नही होने दिया है। नवम स्कन्ध के पदों के अतिरिक्त भी 'सूरसागर' में प्राय ६८ पद ऐसे हैं जिनमें रामचर्चा प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से हुई है। २

सूर ने रामकथा प्राय सर्वत्र भावात्मक चित्रों में अंकित की है। ये चित्र अपने सौन्दर्य और माधुर्य की अनन्त परिणति में अपनी सात्विक शक्ति से हम आकर्षित करते हैं। इन पदो में हम सूर की सौन्दर्य भावना के बड़े भावभीने मधुर चित्र प्राप्त होते हैं। सूर के राम शीलवान् एवं मर्यादायुक्त तो हैं ही परन्तु उनमें अनन्त माधुर्य भी विद्यमान है। सूर ने कृष्ण की प्रेमोपासना की है किन्तु इस प्रेमोपासना में कृष्ण राम से भिन्न नही है।

सूर का राम से सम्बद्ध काव्य आकार की दृष्टि से उनके कृष्णकाव्य से कम अवश्य है किन्तु यही उन्हें रामकाव्य के कवियों में अग्रणी प्रतिष्ठित करने में पर्याप्त है।

---

१ रामभक्ति शाखा रामनिरंजन पाँडेय पृ ३६६

२ वही पृ० ३६७

प्रबन्धात्मकता

प्रबन्धात्मकता

सूर के रामकाव्य की कथा 'सूरसागर' के नवम स्कन्ध म सुरक्षित हुई है। यद्यपि यह कथा भारत की प्राचीन निधियो म से है, जिस पर पूर्ण रीति से प्राय सस्कृति का प्रतिफलन कर वाल्मीकि और गोस्वामी तुलसीदासजी ने उसे हमारे नित्य प्रति के जीवनादर्श का प्रतीक बना दिया है। फिर भी प्रत्येक युग के कवियो और लखको ने नये नये दृष्टिकोण और अपने-अपने मापदण्ड के अनुसार नये-नये भाव प्रस्तुत कर इसमे अद्भुत आकर्षण उत्पन्न कर दिया है और अपनी बुद्धि एव मेधाशक्ति के अनुरूप इसे गढते चले आ रहे हैं।

श्रव्यकाव्य के दो प्रमुख भेद विद्वानो द्वारा मान गये हैं—प्रबन्ध और मुक्तक। प्रबन्ध के भी मुख्यत दो भेद होते हैं—महाकाव्य और खडकाव्य।

जब हम महाकाव्य की कसौटी पर सूर के रामकाव्य को कसने का प्रयास करते हैं तो हमे ज्ञात होता है कि इसक लक्षण विद्वानो द्वारा बताए गये महाकाव्य के लक्षणो मे मेल नही खाते। उनका अभाव अत्यधिक रूप से इसमे दृष्टिगोचर होता है। विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने महाकाव्य के जो लक्षण बताये हैं, उन लक्षणो की कसौटी पर सूर के रामकाव्य को कसना समय और बुद्धि का अपव्यय मात्र ही है। वस्तुत यह महाकाव्य के अन्तर्गत आ ही नही सकता।

प्रबन्ध काव्य की दृष्टि से जब हम सूर के रामकाव्य को देखते हैं तो हमे ज्ञात होता है कि इसका प्रमुख लक्षण 'कथा वस्तु की प्रबन्धात्मकता' इसमे दृष्टिगोचर होता है। इसकी कथा वस्तु प्रबन्धात्मकता का निर्वाह करती हुई, अपने साध्य तक पहुचती है। इसम बालकाण्ड से लेकर उत्तरकाण्ड तक की कथा का वर्णन है। यह स्वय म कथाकाव्य है और आरम्भ से अन्त तक कथा की एक सूत्रता बनाये रखने म समर्थ है। इसमे महाकाव्य और खण्डकाव्य के गुणो का अभाव होने पर भी कवि ने कहानी की श्रृखला को अबाध्य रूप से आगे बढाया है जिसके फलस्वरूप उसम प्रबन्धकाव्य के थोडे बहुत गुण किसी न किसी रूप मे मिलते हैं।

किन्तु हम सूर के रामकाव्य को प्रबन्धकाव्य के नाम से सम्बोधित नही कर सकते, क्योंकि उसमे मुक्तक काव्य के ही गुण अधिक पाये जाते हैं जसा कि डा० हरबशलाल ने 'सूर और उनका साहित्य' के पृष्ठ २८९ पर लिखा है।

सूरदास जी का काव्य प्रबन्धकाव्य नहीं है, उसमें कथा के प्रवाह का निर्वाह नहीं मिलता, भावात्मक स्थलो का ही मनोरम वर्णन मिलता है और कथा का तारतम्य जारी रखने के उद्देश से उन्हें जोडने के लिए यत्र-तत्र एकाध पद में घटनाओ का वर्णन भी कर दिया गया है। घटना वर्णन में कवि की प्रवृत्ति रमी ही नहीं है। सत्य तो यह है कि सूर का उद्देश्य घटना वर्णन अथवा कथा कहना नहीं था उनका उद्देश्य था अपने प्रभु के प्रेम में मत्त होकर उनके सौन्दर्य का वर्णन करते हुए मानस भाव रसामृत को पदो के प्रवाह में बहा देना जिससे सिक्त होकर जन मन भूमि में भगवद् भक्ति का अंकुर फूट निकले।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उनके राम सम्बन्धी पद जहाँ प्रबन्ध निर्वाह करते हुए कथा की पूर्णता प्रस्तुत करते हैं वहा उनका स्वतन्त्र अस्तित्व भी है। वे स्वयं में पूर्ण है और अपना भाव और सौन्दर्य भी स्वयं रखते हैं। इसीलिए लोग उनके पदो को भावविभोर होकर गाया करते हैं और असीम आनन्द का अनुभव करते हैं। कथा में शृंखला का अभाव और ढीलापन भी इसी कारण हम प्राप्त होता है।

सूर वास्तव में आत्माभिव्यंजन कर राम के सम्बन्ध में अपने भाव प्रकट करना चाहते थे। आत्माभिव्यंजन के फलस्वरूप लिखे गये काव्य का प्रमुख ध्येय भावुक और मार्मिक स्थलो का चित्रण है। जिनमें कि सूरदास की प्रवृत्ति खूब रमी है, इससे जहाँ एक ओर कथा के प्रवाह में अड़चन और विरोध उत्पन्न हुआ है वहाँ एक एक प्रसंग पर तीन तीन पद तक लिखे गये हैं जैसे—वन गमन के अवसर पर।

आत्माभिव्यंजन के लिए मुक्तककाव्य ही अधिक उपयुक्त होता है क्योंकि कथा के बन्धन में बंधे हुए कलाकार के भाव बहुत दिनों से पिंजरे में बन्द रहने वाले ऐसे तोते के सदृश होते हैं, जो मुक्त कर दिये जाने पर भी अधिक दूर या ऊँचाई तक नहीं उड़ सकता, और शीघ्र ही स्वयं पिंजरे में आ जाता है।

श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध के दसवें अध्याय में राम के अवतार से लेकर राज्याभिषेक तक की घटनाएं कुल पचपन श्लोकों में, प्राय इतिवृत्तात्मक ढंग से ही में दी गई में वर्णित हैं यह इतिवृत्त सूर के हृदय में भाव तरंगों में परिवर्तित होकर एक सौ अट्ठावन पदों में प्रवाहित हुआ है। बालकांड की घटनाएं पन्द्रह पदों में अयोध्या कांड की इक्कीस पदों में 'अरण्य' की बारह पदों में किष्किन्धा की दस पदों में सुन्दरकांड' की बत्तीस पदों में 'लंका' की अट्ठावन तथा 'उत्तर' की ६ पदों में प्राय सरस भावात्मक चित्रों में प्रस्तुत की गई हैं।

सक्षेप म कथा का सवत्र निर्वाह करते हुए भी सूर के विषय म ध्यान रखने योग्य बात यह है कि चाहे उन्होंने एक ही पक्ति म किसी घटना का वणन किया हो, उसम चाहे भावप्रवणता न होकर उसका सकेत मात्र ही हो परन्तु उन्होने जहाँ तक हो सका है समस्त घटनाओ को चित्रित करने का प्रयास किया है। जहाँ तुलसीदास जी ने इनका विस्तृत और सर्वागीण रूप मे वणन किया, वहाँ सूर ने उनका सकेत मात्र कर अपनी भावात्मक रामायण मात्र १५६ पदों मे पूरी कर डाली है।

राम कथा के अन्तगत सूर ने नई घटनाओ और अन्य नये चरित्रो को प्रस्थापित करने का कही प्रयत्न नही किया है, वे अपनी काव्य चमत्कारिता और नवीन कल्पनाऐं प्रस्तुत कर जनता को चकाचौंध नही करना चाहते थे, उन्होंने तो अपना राम स्नेहमग्न हृदय खोलकर जसा सुना, उसी के अनुसार अपने भावो और विचारो का पुट मिलाकर चित्रित कर दिया है, इसीलिए कथानक को काव्योपयोगी बनाने म कवि ने मूल कथा म कही भी परिवतन नही किया। डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने अपने ग्रन्थ 'सूरदास' पृष्ठ १६४ ६५ पर लिखा है।

'राम कथा सम्बन्धी सूरदास के जितने पद मिलते हैं उन्हे देखकर स्पष्ट हो जाता है कि राम की कथा पूर्वाधार प्रसग के साथ कहना उनका अभीष्ट नहीं है, और न कथा के जिन स्थलो पर उनकी पद रचना मिलती है वे स्थल कथानक की दृष्टि से उसके प्रधान अग कहे जा सकते हैं। उन्होने भावो की मार्मिकता की दृष्टि से ही कथानक के स्थलो को चुना और उस चुनाव मे अपनी व्यक्तिगत भावानुभूति के ही आधार पर निर्णय किया। इन पदो मे ऐसे भी थोडे स पद मिलते हैं, जिनमे कथा के इतिवृत्त को मिलाने का प्रयत्न जान पडता है क्योंकि उनम भ वोत्कर्ष का अभाव और इतिवृत्तात्मकता की प्रचुरता है। वस्तुत इस प्रकार के पद प्राय मार्मिक अभिव्यजना वाले पदो के सदर्भो को भरने के लिए लिखे गये जान पडते हैं।'

रामलालसिंह ने अपने कामायनी अनुशीलन' क पृष्ठ १० पर कथा वस्तु, कथानक के प्रयोजना की पूर्ति कहा तक करती है इस सम्बन्ध म बताते हुए लिखा है कि श्रव्य या दृश्य काव्य, दोना मे कथानक ४ प्रकार का काम करता है।

१–पात्रों का साध्य तक पहुचाता है।
२–भावव्यजना म सहायता करता है।
३–सत असत् का परिणाम दिखाता है।
४–चरित्रो का व्यवस्था करता चलता है।

प्रथम लक्ष्य की पूर्ति सूर के रामकाव्य म पूर्ण रूप स दृष्टिगत होती है। रामकाव्य का प्रमुख लक्ष्य है—रावण वध असत् पर सत की विजय। और जब यह कार्य सम्पन्न कर राम अयोध्या लौटे तो अयोध्या निवासियो ने राम लक्ष्मण और सीता को देखकर सुख सिंधु म स्नान कर लिया।

'जथा जोग भेटे पुरवासी गए भूल सुख सिंधु नहाए
सिया राम लछिमन मुख निरखत सूरदास के नैन सिराए।' पृ० सं० ६१२

दूसरा लक्ष्य भी इसमे पूर्ण रूप मे चरितार्थ हुआ है। कवि की प्रवृत्ति ह' वस्तुत घटनाओ के प्रभाव म रम गई है। सीता हरण' और लक्ष्मण के शक्ति से आहत होने पर राम का विलाप' इसके लिए दृष्टव्य है। सूर का राम काव्य ऐसे ही मर्मस्पर्शी, मार्मिक व्यंजना के स्थलो से परिपूर्ण हैं।

सत असत् का परिणाम यह स्पष्ट रूप म दिखाते हुए, सत की विजय और असत् का विनाश दिखाता है। रावण यहाँ असत् और राम सत के प्रतीक चित्रित हुए हैं।

चरित्रो की व्यवस्था जो कि इसका चतुर्थ लक्ष्य है, इसम पूर्ण रूप से दृष्टिगत नही होता। इसका प्रमुख कारण यही है कि सूरदास ने चरित्र अंकन का प्रयास इसम कही नही किया। घटनाओ के परिवर्तन स पात्रों के चरित्रों में भी उतार चढाव आते हैं, वे अत्यधिक दुःख और वेदना के समय अपने मानवोचित स्वरूप पर आ जाते हैं। उनके ७ विभिन्न रूप हो जाते हैं, जो एक दूसरे स बिल्कुल विपरीत लगते हैं, जिस पर इसी प्रबन्ध में यथास्थान विचार किया गया है। १

इस प्रकार हम देखते हैं कि इसका कथानक शृंखलाबद्ध होते हुए भी प्रबन्धनिर्वाह करते हुए भी मुक्तक के गुणो से परिपूर्ण है। अत हम इसे प्रबन्धात्मक मुक्तक ही कह सकते हैं, क्योंकि यह प्रबन्ध एवं मुक्तक दोनों ही की विशेषताओं स अलंकृत है।

१ देखिये अध्याय 'शील निरूपण और चरित्र चित्रण

मार्मिक दृश्य चित्रन

मार्मिक दृश्य चित्रण

कवि की भावुकता का सबसे अधिक पता यह देखने से चल सकता है कि वह किसी आख्यान के अधिक मर्मस्पर्शी स्थलों को पहचान सका है या नहीं। राम कथा के भीतर ये स्थल अत्यन्त मर्मस्पर्शी हैं राम का अयोध्या त्याग और पथिक के रूप में वन गमन चित्रकूट में राम और भरत का मिलन, शबरी का आतिथ्य, लक्ष्मण को शक्ति लगने पर राम का विलाप, भरत की प्रतीक्षा। इन स्थलों को गोस्वामी तुलसीदास जी ने अच्छी तरह पहचाना है और इनका उन्होंने अपने मानस कवितावली और गीतावली में अत्यन्त सहृदयता के साथ वर्णन किया है। १

सूरदास जी ने भी अपने रामकाव्य मे इन स्थलो को भावुकता से ओत प्रोत कर हृदयस्पर्शी चित्र उपस्थित किया है जिससे हमारे भावों का विलोडन होकर हम उनके मार्मिक भाव व्यंजना वाले पदो का दिग्दर्शन होता है। उनकी भावुकता का परिचय मात्र इस बात से प्रदर्शित हो जाता है कि उन्होंने रामकाव्य का निर्माण अपनी हृदयगत भावनाओं से विवश होकर ही किया था। उनका प्रयोजन कथा को पूर्वापर प्रसंग के साथ कहना नहीं था, अपितु भावो की मार्मिकता को अपने भावुक हृदय द्वारा प्रस्फुटित कर देना मात्र था। इसी कारण उनके द्वारा चुने हुए मार्मिक स्थल जिनमे राम जन्म बाल केलि धनुर्भंग, केवट प्रसंग, पुर वधू प्रश्न, भरत भक्ति, सीता हरण पर राम विलाप, हनुमान द्वारा सीता की खोज, हनुमान सीता संवाद, रावण मन्दोदरी संवाद लक्ष्मण शक्ति पर राम विलाप, हनुमान का संजीवनी लाना सीता की अग्नि परीक्षा और राम का अयोध्या प्रवेश विशेष उल्लेख योग्य है। २

कमललोचन राम अपनी सुकोमल पत्नि और लघु भ्राता को लेकर घर छोडकर वन वन घूमते फिरते हैं इससे अधिक मार्मिक स्थल और कौन सा हो सकता है, इस दृश्य का चित्र, सूरदास ने बडी ही उत्कंठा के साथ कथा शृंखला की पर्वाह न करते हुए एक साथ तीन-तीन पदो मे चित्रित किया है। ३ जिससे कथानक विशृंखल अवश्य हो गया है किन्तु भावों का उत्कर्ष इस सीमा पर पहुंच गया है कि उसमे अवगाहन कर हमारा हृदय भाव विभोर हो उठता है।

१ 'गोस्वामी तुलसीदास' रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ ७० तुलसी की भावुकता
२ 'सूरदास' डा ब्रजेश्वर वर्मा पृष्ठ २६४
३ 'देखिये पद संख्या ४८७, ४८८ ४८६ नवम स्कन्ध

ऐसा दृश्य स्त्रियों के हृदय को सबसे अधिक स्पर्श करने वाला, उनकी प्रीति, दया और आत्म त्याग को सबसे अधिक उभारने वाला होता है। यह बात समझ कर गोस्वामी तुलसीदास की भाँति सूरदास ने भी ग्राम वधुओं का सन्निवेश किया है। उन तीनों राम, लक्ष्मण और सीता की त्रिमूर्ति को जब सूर की ग्राम वधुएँ वन पथ पर जाते हुए देखती हैं तो उनके त्रिविध ताप दहिक, दैविक और भौतिक नष्ट हो जाते हैं।

'देखि मनोहर तीनो मूरति त्रिविध ताप तन जात,' प स० ४८७

जहाँ तुलसीदास की ग्राम वधुएँ उनका वृतान्त सुनकर राजा की निष्ठुरता पर पछताती हैं, कैकयी को कुचाल पर भला-बुरा कहती हैं, वहाँ सूरदास की ग्राम वधुएँ इस अद्भुतता से मुग्ध होकर उन्हें अतिथि की तरह अपने घर ले जाना चाहती हैं, उनकी स्थिति पर नेत्रों से अश्रु वर्षा करने लगती हैं और अपने-अपने गावों और घरों को छोड़कर वे सब बहुत दूर तक उन लोगों के पीछे-पीछे ठगी सी चली जाती है और बिछुड़ने के समय उन्हें बहुत कष्ट होता है

पुरवधुओं के प्रश्न करने पर ग्रामीण गोपियों की निश्छल स्वाभाविकता के साथ सूरदास की सीता कहती है।

सासु की सौति सुहागिनिसो सखि अतिही पिय की प्यारी।
अपने सुत कों राज दिवायो, हमको देस निकारी। प० स० ४८८

इसी प्रकार राम - लक्ष्मण का परिचय पूछने पर भी वह निःसंकोच उत्तर देती है।

गौर बदन मेरे देवर सखि पिय मम स्याम सरीर।

चित्रकूट में राम और भरत का मिलन भ्रातृत्व प्रेम का एक आदर्श उपस्थित करता है। सूरदास जी के भरत का जीवन और अस्तित्व तुलसी के भरत के समान ही राममय है। गोस्वामीजी ने भरत के चरित्र को 'मानस' में पर्याप्त अवकाश व स्थान मिलने के कारण अधिक उभारा है, किन्तु सूर को कुल १५८ पदों में पूरी भावात्मक रामायण प्रस्तुत करना है, फिर भी सूर ने मानस के हृदय को पूर्णत अंकित कर लिया है। उसका मार्मिक स्पन्दन सूर के हृदय से अनुभूत नहीं रह पाया है।

भरत के समान सात्विक शील वाले व्यक्ति की उस ग्लानि से सूर सर्वथा परिचित हैं, जो उसे किसी पाप से सम्बद्ध हो जाने पर होती है। राम के समान

मर्यादा पुरुषोत्तम को भरत के कारण वन वन भटकना पड़े इससे बढ़कर दूसरा पाप भरत अपने लिए समझते ही नहीं। राज्य उन्हें आग की तरह लग रहा था। वे कहते हैं

कौन काज यह राज हमारें, इहिं पावक परि कौन जियो १

पश्चाताप की जो आग उनके भीतर उत्पन्न हो गई है। उससे उनके प्राण सकट में हैं। सूरदास जी ने अपने भरत और शत्रुघन की दशा का वर्णन इस सकट-कालीन स्थिति में किया है उन्होंने लिखा है 'दोनों भाई धरती पर इस तरह लोट रहे थे, मानो उन्होंने शरीर को जला देने वाला कोई भयानक विष पी लिया हो।

लोट सूर धरनि दोउ बधू मनो तपत विष विषम पीयो १

सूरदास जी के भरत का हृदय प्रेमोत्कर्ष के फलस्वरूप राममय हो चुका है। उसे व्यक्त करते हुए वे कहते हैं ' सेवक को राज्य और स्वामी को वन, विधाता ने यह उल्टी बात कब लिख दी, चन्द्रमा के प्रेम में विभोर चातक की भांति हमारा प्रेम राम के कमल मुख को दृष्टिगत कर सम्पन्न होता रहता था, अब उन्हीं राम के अभाव में हमारा अयोध्या से क्या सम्बन्ध रह गया है।

भरत को मु डित वेश देखकर राम का सयम टूट जाता है, वे विह्वल होकर भावावेश के कारण आंखों में अश्रु प्रवाहित करते हुए भरत से लिपट जाते हैं और पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर धरती पर मुरझा कर गिर पड़ते हैं। २

सूर के द्वारा चित्रित दशरथ और कौशल्या जैसे पात्र भावुकता से ओत प्रोत होकर मानो उन्हीं के हृदय की पुकार प्रदर्शित करते से जान पड़ते हैं। वात्सल्य के साथ २ वियोग का और भी स्वाभाविक एव मार्मिक अकन उन्होंने प्रस्तुत किया है। दशरथ मात्र एक दिन के लिए राम को रोक लेना चाहते हैं चार प्रहर, उनके मीठे बचनों को सुनकर तृप्त होना चाहते हैं। उन्हें इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि राम से बिछुड़कर प्राण शरीर से भी बिछुड़ जायेंगे, इसीलिए राम के दुर्लभ दर्शन को वे कम से कम एक दिन के लिए और सुलभ बना लेना चाहते हैं। ३

---

१ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरजन पाडेय पृष्ठ ४०३

२ देखिये पद ४६६ नवम स्कन्ध

३ 'वही पद ४७७

ऐसा दृश्य स्त्रियों के हृदय को सबसे अधिक स्पर्श करने वाला, उनकी प्रीति, दया और आत्म त्याग को सबसे अधिक उभारने वाला होता है। यह बात समझ कर गोस्वामी तुलसीदास की भाँति सूरदास ने भी ग्राम वधुओं का सन्निवेश किया है। उन तीनों राम, लक्ष्मण और सीता की त्रिमूर्ति को जब सूर का ग्राम वधुएँ वन पथ पर जाते हुए देखती हैं तो उनके त्रिविध ताप दैहिक, दैविक और भौतिक नष्ट हो जाते हैं।

'देखि मनोहर तीनो मूरति, त्रिविध ताप तन जात,' प स० ४८७

जहाँ तुलसीदास की ग्राम वधुएँ उनका वृत्तान्त सुनकर राजा की निष्ठुरता पर पछताती हैं, कैकयी की कुचाल पर भला-बुरा कहती हैं, वहाँ सूरदास की ग्राम वधुएँ इस अद्भुतता से मुग्ध होकर उन्हें अतिथि की तरह अपने घर ले जाना चाहती हैं, उनकी स्थिति पर नेत्रों से अश्रु वर्षा करने लगती हैं और अपने-अपने गावों और घरो को छोड़कर वे सब बहुत दूर तक उन लोगो के पीछे-पीछे ठगी सी चली जाती है और बिछुड़ने के समय उन्हें बहुत कष्ट होता है

पुरवधुओं के प्रश्न करने पर ग्रामीण गोपियो की निश्छल स्वाभाविकता के साथ सूरदास की सीता कहती है।

सासु की सौति सुहागिनिसो सखि, अतिही पिय की प्यारी।
अपने सुत कौ राज दिवायौ, हमको देस निकारी। प० स० ४८८

इसी प्रकार राम - लक्ष्मण का परिचय पूछने पर भी वह नि संकोच उत्तर दे देती है।

गौर बदन मेरे देवर सखि, पिय मम स्याम सरीर।

चित्रकूट मे राम और भरत का मिलन भ्रातृत्व प्रेम का एक आदर्श उपस्थित करता है। सूरदास जी के भरत का जीवन और अस्तित्व तुलसी के भरत के समान ही राममय है। गोस्वामीजी ने भरत के चरित्र को 'मानस' मे पर्याप्त अवकाश व स्थान मिलने के कारण अधिक उभारा है, किन्तु सूर को कुल १५८ पदों मे पूरी भावात्मक रामायण प्रस्तुत करना है फिर भी सूर ने मानस के हृदय का पूर्णत अंकित कर लिया है। उसका कोई स्पन्दन सूर के हृदय से अनुभूत नहीं रह पाया है।

भरत के समान सात्विक शील वाले व्यक्ति की उस ग्लानि से सूर सर्वदा परिचित हैं, जो उसे किसी पाप से सम्बद्ध हो जाने पर होती है। राम के समान

र्यादा पुरुषोत्तम को भरत के कारण वन-वन भटकना पड़े इससे बढ़कर दूसरा पाप भरत अपने लिए समझते ही नहीं। राज्य उन्हें आग की तरह लग रहा था। वे कहते हैं

कौन काज यह राज हमारें, इहिं पावक परि कौन जियौं १

पश्चाताप की जो आग उनके भीतर उत्पन्न हो गई है। उससे उनके प्राण सकट मे है। सूरदास जी ने अपने भरत और शत्रुघन की दशा का वर्णन इस सकट-कालीन स्थिति म किया है उन्होंने लिखा है 'दोनो भाई धरती पर इस तरह लोट रहे थे, मानो उन्होंने शरीर को जला देने वाला कोई भयानक विष पी लिया हो ।

लोटे सूर धरनि दोउ बधू मनो तपत विष विषम पीयौ १

सूरदास जी के भरत का हृदय प्रेमोत्कर्ष के फलस्वरूप राममय हो चुका है। उसे व्यक्त करते हुए वे कहते हैं ' सेवक को राज्य और स्वामी को वन, विधाता ने यह उल्टी बात कब लिख दी, चन्द्रमा के प्रेम म विभोर चातक की भाँति हमारा प्रेम राम के कमल मुख को दृष्टिगत कर सम्पन्न होता रहता था, अब उन्ही राम के अभाव म हमारा अयोध्या से क्या सम्बन्ध रह गया है।

भरत को मुण्डित वेश देखकर राम का सयम टूट जाता है, वे विह्वल होकर भावावेश के कारण आखो म अश्रु प्रवाहित करते हुए भरत से लिपट जाते हैं और पिता का मृत्यु का समाचार सुनकर धरती पर मुरझा कर गिर पडते हैं। २

सूर के द्वारा चित्रित दशरथ और कौशल्या जसे पात्र भावुकता स ओत प्रोत होकर मानो उन्ही के हृदय की पुकार प्रदर्शित करते से जान पडते हैं। वात्सल्य के साथ २ वियोग का और भी स्वाभाविक एव मार्मिक अ कन उन्होंने प्रस्तुत किया है। दशरथ मात्र एक दिन के लिए राम को रोक लेना चाहते हैं चार प्रहर, उनके मीठे बचनो को सुनकर तृप्त होना चाहते हैं। उन्हे इसम तनिक भी सन्देह नही है कि राम से बिछुड़कर प्राण शरीर से भी बिछुड जायेंगे, इसीलिए राम के दुर्लभ दर्शन को वे कम से कम एक दिन के लिए और सुलभ बना लेना चाहते हैं। ३

१ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरजन पाडेय पृष्ठ ४०३

२ देखिये पद ४६६ नवम स्कन्ध

३ 'वही' पद ४७७

कौशल्या विलाप करती हुई कहती है कि कोई आकर राम को गोद, जब तक भरत अयोध्या न लौट आयें तब तक के लिए राम दे जाय।

अपने परिवार और समग्र विश्व के लिए राम के हृदय में स्थान है। उनके नेत्रों में जल उमड़ता आता है और वे करुणार्द्र हो उठते हैं। १

इतनी भावुकता, तन्मयता, सहृदयता और हृदय स्निग्धता होते हुए भी सूर के राम-लक्ष्मण शक्ति के अवसर पर आठ-आठ आँसू बहाते हुए भी, भ्रात प्रेम और हृदय गत विह्वलता का आभास न देकर शिथिलता का हल्का सा बोध अधिक कराते हैं, जहाँ तुलसीदास के मर्यादा पुरुषोत्तम राम, शोक की अत्यधिक व्यंजना स्वाभाविक रूप में प्रदर्शित करते हुए, अपना चरित्र ग्लानि का विचार न करते हुए, एक क्षण के लिए सारे नियम, मर्यादा और सारी दृढ़ता तोड़ते हुए भाव विभोर होकर यहाँ तक कह उठते हैं

जो जनतेऊ बन बंधु बिछोहू, पिता बचन मनतेऊ नहिं ओहू।

यहाँ सूरदास के राम में अपने कर्तव्य के प्रति अत्यधिक जागरुकता शरणागत के प्रति रक्षा की भावना और निःसहाय के प्रति करुण भावों का उदय एवं भ्रातृ प्रेम की जीतकर जन समाज के सम्मुख एक आदर्श प्रस्तुत करता है। यहाँ सूर ने अपनी भावुकता का निर्वाह करते हुए भी अपने राम को आदर्शच्युत नहीं होने दिया है। यही 'सूर' का 'सूरत्व' है।

अपने प्रिय पुत्र के शक्ति लगने पर मातृ हृदय की व्यथा सुमित्रा के उद्गारों से जानी जा सकती है जो उन्होंने राम के प्रति कहलाये हैं। वे हनुमान से कहती हैं "तुम राम से जाकर कहना कि वे अयोध्या लौटते समय माता से लजायें नहीं। सेवक यदि रण में जूझ जाए तो भी ठाकुर घर लौट आता है।" २

क्या अपने प्रिय पुत्र को मृत्यु के मुँह में देखकर सुमित्रा का मातृ हृदय विचलित नहीं हुआ होगा। क्या उसने यह कठोर आघात यों ही सहन कर लिया होगा? नहीं लेकिन उसके सामने एक आदर्श था, एक परम्परा थी, एक दूसरे पर स्वयं को आत्मोत्सर्ग करने के उदाहरण थे जिसके फलस्वरूप उसका हृदय अन्दर से फूट फूट कर आर रहा होगा किन्तु क्या मजाल कि ऊपर से उसका प्रकटीकरण हो जाय।

---

१ देखिये पद ४६६

२ वही पद ५९८

उनके रघुवीर धीर, सीता के वियोग म करुण विलाप करते हैं, जिसे सुनकर स्वय सूरदास भी विस्मित हो जाते हैं। किन्तु जब लोकोपवाद से डरकर रावण के यहाँ से लौटी सीता को अगीकार करने की अपेक्षा व लक्ष्मण को हुताशन रचने की आज्ञा देते हैं तो सूरदास का भावुक हृदय अपना सयम तोड देता है और हनुमान के बहाने वे अपने दुख को प्रकट करते हुए कहते हैं कि मुझसे यह दृश्य नही देखा जाता। १

सूर का हृदय जो पहले से ही गोपियो की विरह कथा से विदग्ध था सीता की वियोग व्यथा म फूट पडता है। उनका हृदय सयम तोड देता है और सीता के द्वारा यहाँ तक कहलवा देता है

सुनु कपि व रघुनाथ नही ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता गृह तोरयो निमिष महीं।
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति गति डारी काटि तही
जिन रघुनाथ हाथ खर दूषन प्रान हर सरहा।
व रघुनाथ तज्यो प्रन अपनो, जागिनि दसा गही ?
के रघुनाथ दुखित कानन के नृप भए रघुकुलहीं।
के रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकधर डरही।
छाडी नारि विचारि पवन सुत, मरु बाग बसही।
के हो कुटिल, कुचील कुलच्छनि तजी बन तबही।
सूरदास स्वामी सा कहियो अब विरमाहि नही। प स ५२५

भावदशा का तात्पय न समझने वाले, नीति के नाम पर पापड धारण करने वाले इस चरित्रग्लानि समझेंगे, पर ऐसे प्रियतम का शोक, जिससे क्षणमात्र के लिए भी सीता को अलग न होना पडा था, जिसके प्रेम और स्नेह के वशीभूत होकर वन के कटक और आपदाओं को उसने पुष्प सदृश समझा था, और एक आदर्श पतिव्रता नारी की भाँति जिसका जीवन प्रभु के चरणतल में ही व्यतीत हुआ था, वह अगर अपने स्वामी से दूर रहे तो इससे अधिक दुर्भाग्य की बात उसके लिए क्या हो सकती थी। यदि एक क्षण के लिए भी इन सब बातो का विचार छुडा देने वाला न होता, तो सीता के हृदय की वह कोमलता, स्निग्धता और उत्कृष्ट प्रेम की झाँकी कहाँ दिखलाई पडती।

---

१ देखिये पद सख्या ६०६

लक्ष्मण को शक्ति लगने पर राम की व्याकुलता देख कार्यतत्परता की मूर्ति हनुमान कहते हैं

> रघुपति मन संदेह न काजै।
> मो देखत लछिमन क्यों मरिहैं मोको आज्ञा दीजै,
> कहौ तो सूरज उगन देउँ नहिं दिसि दिसि बाढ़ै ताम।
> कहौ तो गन समेत ग्रसि खाऊँ जमपुर जाइ न, धाम।
>
> सूरदास मिथ्या नहिं भाषत मोहिं रघुनाथ दुहाई। प स ५१२

हनुमान के इस 'वीरोत्साह' का निरूपण सूरदास का भावुक और भक्त हृदय ही कर सकता था जो अधिकाधिक अपने भगवान के साथ आत्मीयता का इच्छुक है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूरदास का भावुक हृदय उनके 'रामचरित सम्बन्धी' पदों में पग पग पर पलक पाँवड़े बिछाता हुआ भक्तों और रसिकों को रसमग्न करता हुआ उनमें अद्भुतता सहृदयता और संवेदना जगाता हुआ दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने रामचरित के सभी मार्मिक स्थलों को चुन चुन कर उनमें भावोद्रेक का संचार किया है। इनका चित्रण करना और अपना भावनाओं को उडेलकर उन्हें रस सिक्त बनाना ही उनका प्रमुख उद्देश्य था। फलस्वरूप राम का प्रबन्ध निर्वाह न हो पाने पर भी, उसमें इतिवृत्त को मिलाने की चेष्टा किये जाने पर भी और कथा का स्वतन्त्र रूप सामने न आने पर भी, जिन भावों का उद्रेक सूरदास ने रामकाव्य के मार्मिक स्थलों को चुन चुन कर उडेलने का अथक प्रयास किया है उसका वर्णन अवर्णनीय है।

गार्हस्थ चित्र

कविता वह साधन है कि जिसके द्वारा मनुष्य का शेष सृष्टि के साथ रागात्मक सम्बन्ध स्थापित होता है और उसकी रक्षा होती है। आधुनिक आचार्यों ने कविता की इस परिभाषा को ममत्व दिया है। कविता महत्व की क्षुधा को शान्त करती है इसीलिए वह मनुष्य को अधिक प्रिय रहा है। कविता उसके राग द्वेषों का सुन्दर प्रतिबिम्ब है। कविता के ३ तत्व, राग कल्पना और विचार में राग का ही प्राधान्य है। कविता है ही भावप्राण। राग का रंग चढ़ने पर ही विचार और कल्पना कविता की सृष्टि कर सकते हैं, इसीलिए भावुक हृदय ही कवि के सम्मान से सुशोभित हो सकता है। उसकी परीक्षा उसके हृदय की परीक्षा है। उसका गौरव उसके हृदय की विशालता और गम्भीरता के अनुपात से ही होता है। १

रामकाव्य में मानव राग द्वेषों की क्रीड़ा के लिए विस्तृत क्षेत्र है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने बड़े २ मार्मिक स्थलों का चित्रण कर अमरता प्राप्त कर ली है। आज उनकी 'रामचरित मानस' जन जन के गले का कण्ठहार बनकर सुशोभित हो रही है। रामकाव्य के प्रणेता और उस पर उत्कृष्ट काव्यांग का चित्रण करने वाले अनेक कवि, अपनी तूलिका से नये नये चित्र प्रस्तुत कर गौरवान्वित हो रहे हैं फिर सूर तो 'सूर' ही थे, उनकी प्रतिभा अगाध थी। उन्होंने अपने दिव्य चक्षुओं से भावों का जो सागर उमड़ता हुआ देखा, वह स्वयं में श्रेष्ठ और अतुलनीय है।

सूर सागर में गार्हस्थ्य के बड़े ही अद्‌भुत एवं अपूर्व चित्रों की सर्जना हुई है। सूर की सूक्ष्म दृष्टि गार्हस्थ्य के प्रत्येक अंग पर पड़ी है। गार्हस्थ्य जीवन के मूलाधार हैं, वात्सल्य एवं दाम्पत्य और सूर इन दोनों ही के चित्रण में अपूर्व हैं, अनुपम हैं। आचार्य शुक्ल ने सूरदास' नामक पुस्तक के पृष्ठ १६७ पर लिखा है 'वात्सल्य और शृंगार के क्षेत्रों का जितना अधिक उद्‌घाटन सूर ने अपनी बन्द आँखों से किया है उतना किसी अन्य कवि ने नहीं। इन क्षेत्रों का वे कोना कोना झाँक आये हैं।'

नन्द बाबा और जसुमति मैया के लाडले गुपाल का अनुपम चित्र जनमानस के हृदय पर सूर ही की लेखनी अंकित कर सकी है। नन्द का परिवार किसी देवता

---

१ 'साकेत एक अध्ययन' डा नगेन्द्र पृष्ठ १८

का परिवार नही है परन्तु वह एक साधारण हिन्दू गृहस्थ का परिवार है। गोकुल ग्राम का प्रमुख परिवार होने से ग्राम म इस परिवार का महत्व एव आदर विशिष्ट अवश्य है किन्तु इस गृहस्थी के प्रत्येक सदस्य के लिए भी सारे ग्रामवासी अपने ही हैं। नद के रूप मे एक पुत्रवत्सल सद्गृहस्थ पिता और यशोदा के रूप म अनिष्ट भीरु वत्सला माता के दशन होते हैं। कृष्ण आराध्य हैं, साक्षात ब्रह्म हैं फिर भी उनका किसी अत्यन्त रूपवान नटखट बालक का सा रूप अत्यन्त ही सजीव है। साराश यह है कि सूरदास जी नन्द की गृहस्थी के रूप म एक आदर्श हिन्दू गृहस्थ का अत्यन्त ही जीवत चित्र आता है।

किन्तु सूरदास जी के काव्य का रामकाव्य वाला अश ही हमारा आलोच्य है। सूर सागर के नवम् स्कन्ध मे रामावतार की कथा कही गई है जो भागवतानुसार होते हुए भी भागवत् की राम कथा की अपेक्षा अधिक विस्तृत एव भाव पूर्ण है। रामावतार की सारी कथा गेय पदो की कवित्वपूर्ण शली म वर्णित है। वस्तुत रामावतार की सम्पूर्ण कथा क्रम व्यवस्थित ढग से दे देना कवि का अभीष्ट नही जान पडता। रामकाव्य के मार्मिक स्थलो पर स्फुट पद रचना करना ही कवि का उद्देश्य प्रतीत होता है। इन्ही स्फुट पदो को क्रम से रखकर कवि ने पूरा कथा का ढाचा तययार कर दिया है सम्पूर्ण कथा म विवरणात्मकता का नितान्त अभाव है। प्रत्येक पद कवि की हृदयानुभूति का परिचायक है अत स्वाभाविक है कि उक्त काव्य म गाहस्थ के उतने पूर्ण चित्र उपलब्ध नही हैं जितने गोस्वामी जी के मानस म हैं, फिर भी गाहस्थिक सम्बन्धो एव दृश्यो की जितनी भी अभिव्यक्ति हुई है, वह पूर्ण सफल एव आत्मीयता पूर्ण है। तो आइये देखें कि ये चित्र कम हैं कितना लुभाते एव आकर्षित करते हैं।

राम जन्म स सम्बन्धित ३ पद हैं। एक धार्मिक सम्पन्न भारतीय सद्गृहस्थ के यहाँ प्रथम पुत्र के जन्मोत्सव का सजीव चित्रण इन पदो मे हुआ है। यद्यपि केवल ३ पदो म ही इस उत्सव को बाधा नहीं जा सकता, अत इनम चित्र का रेखाकन मात्र ही हो पाया है किर भी ये रेखाऐ अत्यन्त सशक्त हैं और एक सजीव चित्र उपस्थित कर देती हैं।

अजोध्या बाजत आजु बधाई।

गावैं सखी परस्पर मगल, रिषि अभिषेक कराई।
भीर भई दशरथ कें आँगन, सामवेद धुनि छाई। पद स ४६१

दाम्पत्य गाहस्थ जीवन का मूलाधार है क्योंकि मनुष्य के भाव कोष पर सबसे व्यापक और गहरा अधिकार उस व्यक्ति का होगा जो सबसे अधिक निकट है। काम की प्रमुखता होने के कारण इस दृष्टि से स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध ही अधिक निकट प्रतीत होता है। उनके लिए मानसिक एकता के साथ शारीरिक एकता भी अनिवार्य हो जाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध अथवा रति अथवा शृंगार ही मनुष्य जीवन की प्रमुख भावना है। सूरदास जी ने कंकण मोचन के अवसर पर सीता राम के दाम्पत्य का अत्यन्त भावभीना अंकन किया है। सीता के कर स्पर्श से राम के हाथों में सात्विक अनुभाव का कंपन पैदा हो जाता है और वे कंकण नहीं छुड़ा पाते।

कर कंपे कंकन नहिं छूटे। प स ४६६

राम जानकी को वन जाने से रोकते हुए उन्हें जनकपुर में जाने की सलाह देते हैं और कहते हैं कि पति की आज्ञा मानना ही सच्चा पातिव्रत है। इस कथन का उत्तर जहाँ एक ओर सीता के हृदय की कोमलता एवं कर्तव्यनिष्ठा को व्यक्त करता है वहाँ दूसरी ओर वह सफल दाम्पत्य प्रेम का भी उत्कृष्ट उदाहरण बनकर सम्मुख आता है सीता कहती है

तुम्हरो रूप अनूप भानु ज्यों जब नननि भरि देखौं।
ता छिन हृदय कमल प्रफुलित ह्वै जनम सफल करि लेखौ।
तुम्हर चरन कमल सुख सागर, यह व्रत ही प्रतिपलि हो।
सूर सकल सुख छोडि आपनो, वन विपदा संग चलि हो। प स ४७६

इन शब्दों में सीता के पातिव्रत की गंध छुपी हुई है। वह पति की ऐसी आज्ञा जिससे उसे पति से दूर रहना पड़े अथवा जिसके द्वारा पति के दुखों में वह हाथ बटा सके स्वीकार नहीं करती। वह तो उन्हीं के चरणों में रहकर दुख-सुख में उनका हाथ बटाकर पातिव्रत धर्म की साध पूरी करने की इच्छुक है। भारतीय नारी सुख-दुख दोनों में ही पति की अनुगामिनी होती है, फिर सीता जैसी प्रातःस्मरणीया नारी कैसे पीछे रहती।

राम में भी सीता के हरण के पश्चात् उसके वियोग की गुरुता कम नहीं। स्वयं 'सूर' वियोग की उस गुरुता को देखकर असमंजस में पड़ जाते हैं और कहने लगते हैं जगत गुरु राम की गति अद्भुत है। विचार अपनी सीमा के भीतर उस गति को बाँध नहीं सकता अनंत राम भी कामवश होकर करुणा से इस प्रकार

सुनो कपि, कौशिल्या की बात ।

इहि पुर जनि आवहिं मम वत्सल, बिनु लछिमन लघु भ्रात । प स ५६७

किन्तु सुमित्रा का आजपूर्ण मातत्व भी कम नहीं है । जो कहती है कि सेवक के रण म जूझने पर भी ठाकुर घर लौटता है। लक्ष्मण नही लौटे तो कोई बात नहीं किन्तु राम अवश्य ही लौट आयें ।

मारुत सुतहि संदेश सुमित्रा ऐसें कहि समुझावे,
सेवक जूझि परे रन भीतर, ठाकुर तउ घर आवे । प स ५९८

यह है उस माता का हृदय जो अन्त स्थल मे सहृदयता की एव मातत्व की गरिमा रखते हुए भी इस विपदकाल मे पाषाण बन चुका है, और जिसकी थोडी भी भावुकता परिवार के चल आ रहे आदर्शों पर कुठाराघात कर सकती है । यहाँ दोनो माताओं के अन्तगत ऐक्य और पारस्परिकता की रक्षा के लिए 'मेरे' और 'तेरे' की भावना का पूर्ण बहिष्कार है । इसी कारण जहाँ कौशल्या बिना लक्ष्मण को साथ लिए राम का आगमन नही देखना चाहती, वहाँ दूसरी ओर सुमित्रा राम को लक्ष्मण के जूझ मरने पर भी आने को आमन्त्रित करती है । यही भारतीय आदर्श हिन्दू परिवार की झाँकी है, जिनका त्याग उत्सग एव प्रेम अनन्य है । पारिवारिक प्रेम का यही आदर्श गार्हस्थ का रीढ है, जिसका इतना ज्वलन्त चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है ।

कौशल्या का राम और लक्ष्मण के लिए कौए से शकुन विचारना भारतीय परिवार की माता का पूर्ण चित्र ही उपस्थित कर देता है

बैठी जननि करति सगुनौती ।
लछिमन राम मिलैं अब मोको, दोउ अमोलक मोती ।

अब कें जा परचौ करि पावौ अरु देखौ भरि आँखि ।
सूरदास सोने कें पानी मढौ चोंच अरु पाखि । प स ६०८

गार्हस्थ में मातृ प्रेम अपना विशिष्ट स्थान रखता है । सूर के लक्ष्मण राम के साथ ही बन जाना चाहते है । राम द्वारा पुर म ही रहने की सलाह देने पर लक्ष्मण कुछ नही बोल पाते केवल

लछिमन नैन नीर भरि आए ।
उत्तर कहत कछु नहिं आयौ, रहे चरन लपटाए । प स ४८१

राम के चरणो से लिपट कर उनका अनन्य प्रेम स्वय उनके प्रश्न का उत्तर दे देता है। अत्यधिक भावावेग म लीन हो जाने पर मनुष्य के मुख मे एक भी शब्द नही निकल पाता। वह सिर्फ आसुओ से ही अपनी मनाइच्छा व्यक्त कर देता है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है जिसका प्रतिस्थापन (प्रकटीकरण सूर ने लक्ष्मण के माध्यम स निश्चय ही सत्य की कसौटी पर परख कर किया है। लक्ष्मण के हृदय म राम के प्रति श्रद्धा के साथ २ अनन्य प्रेम भी था फिर राम के बन गमन से समय क्या वह उनका प्रस्थान मात्र ही देखता रहे। लक्ष्मण यह नही देख सके और करुणाद्र होकर राम के चरणो से लिपट गये। उनके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला, किन्तु भगवान राम तो सर्वज्ञ हैं। लक्ष्मण के प्रेम की गुरुता समझ कर उन्होने उनको भी अपने साथ चलने की आज्ञा प्रदान की।

हनुमान द्वारा लाई हुई सजीवनी स लक्ष्मण का जागरण राम म अनत उत्साह भर देता है। केवल लक्ष्मण ही की राम पर प्रीति नही है अपितु राम को भी लक्ष्मण पर उतनी ही प्रीति है, लक्ष्मण के साथ साथ भरत एव शत्रुघन की प्रीति भी रामके प्रति अनन्य है। भरत छोटे होते हुए बडे भाई के अधिकार को कसे ग्रहण कर सकते हैं। सिंह की बलि को कुत्ता कैसे खा सकता है।

आए भरत दीन ह्वै बोले कहा कियो कैकइ मा"।
हम सवक वे त्रिभुवन पति, कत स्वान सिंह बलि खाइ। प स ४६१

यहाँ स्वय को स्वान और त्रिभुवनपति का सवक बताकर जहाँ प्रेम के उस अनन्य भाव की सृष्टि की है जो अपने को निम्न असहाय और स्वय का लघु समझने की प्रवृति का बोधक है, वहाँ दूसरी ओर अपने आराध्य को सिंह की उपमा देकर एव उसके सदृश गुण एव कार्यो स पूर्ण बताकर, सबका नियन्ता और तीनो लोको का स्वामी बताया है। स्वय को लघु बताकर और उनके सम्मुख दीनता प्रकट कर, प्रभु को अपनी ओर आकर्षित करने का ऐसा ही प्रयत्न तुलसीदास जी की 'विनय पत्रिका' में आदि स अन्त तक भरा पडा है। सूरदास जी का यह पद भी तुलसी के दैन्य भावो के अनुरूप लगता है।

भरतजी ग्लानियुक्त होकर अपनी दीनता एव विवशता भगवान के सम्मुख प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि आपकी उच्चता को सीमा का मुकाबला मैं एक अबाध कस कर सकता हू। मैं उस पद के योग्य नही हू, जो आपसे सम्बंधित था। वे राम के अभाव म अयोध्या से भी कोई नाता स्वीकार करना नही चाहते।

मुख श्रम्बिन्द दरसि हम जीवत, ज्यों चकोर ससि राता ।
सूरदास श्रीरामचन्द्र बिनु कहा श्रजोध्या नाता । प स ४६३

भृत्यु वर्ग भी भारतीय गार्हस्थ जीवन मे एक प्रमुख स्थान रखता है। हनुमान का सा आदर्श सेवक चरित्र ही इसके उदाहरण स्वरूप पर्याप्त हैं। स्वय राम ने उनकी प्रशसा करते हुए एक स्थान पर कहा है

श्रहो पुनीत मीत केसरि सुत, तुम हित बधु हमारे,
जिह्वा रोम रोम प्रति नाहीं पौरुष गनौ तुम्हारे प स ५६१

राम स्वय को हनुमान का बहुत बडा आभारी मानते हैं और उसके कार्यो की प्रशसा करते हुए अघाते नही। वे तो यहाँ तक कहते हैं कि मेरे रोम रोम मे जिह्वा नहीं इसलिए मैं तुम्हारे द्वारा किये गये अनत उपकारो को गिना तक नहीं सकता।

हनुमान भी भगवान की कातर वाणी सुनकर दृढतापूर्वक बोल उठे
रघुपति मन सदेह न कीजै।
मो देखत लछिमन क्यो मरिहैं मोकों आज्ञा दीजै।
सूरदास मिथ्या नहिं भाषत मोहिं रघुनाथ दुहाई। प स ५६२

इस दृढता म कितना आत्मविश्वास और प्रभु के प्रति असीम स्वामिभक्ति छिपी पडी है, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। और फिर अपने साहस का वर्णन कर अन्त मे श्रीरघुवर, मोसो जन जाके ताहि कहा सकराई कहकर अपने को भगवान राम का अकिंचन सेवक ही प्रदर्शित कर उनके चरण कमलो का आराधक ही स्वय को मानते हैं। एक ओर इतनी पर्वत के समान दृढता और प्रचण्डता तथा दूसरी ओर इतनी सरलता और सहृदयता भक्तहृदय हनुमान के अन्तगत ही प्राप्त हो सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि सूरदास जी ने केवल १५८ पदो मे राम कथा गाई है साथ ही इसमे विस्तृत चित्रो के लिए अवकाश न होने पर भी जिस गार्हस्थ के आदर्श की योजना सूर ने आयोजित की है। वह दृष्टव्य है। गार्हस्थ का कोई भी कोना सूर की मार्मिक एव भावुक दृष्टि से नही बचा। सभी पात्रो म उनकी हार्दिक अनुभूति अभिव्यजित हुई है।

—•—

पात्रों का शील निरूपण और चरित्र चित्रण

पात्रों का शील निरूपण और चरित्र चित्रण

काव्य की उच्च भूमि तक पहुचते-पहुचते हमारे हृदयस्थित मनोविकार अपने क्षणिक रूप का त्यागकर, जीवनव्यापी रूप धारण करते दृष्टिगत होते हैं। वे सब प्रकार का स्थायित्व ग्रहण कर लेते हैं और इसी का प्रगटीकरण कर हम पात्रों का शील निरूपण और चरित्र चित्रण कर सकते हैं। यह अवस्था रस सचार से आगे बढ़ने पर आती है किन्तु इसका वर्णन करना आसान नहीं। साधारण और फुटकर कवि इसका चित्रण नहीं कर सकते। प्रबन्ध कौशल से युक्त कवि की धारा घना हो इसे सफल बनाने में सहायक एव उपयुक्त सिद्ध हो सकती है। इस क्षेत्र में तुलसीदासजी ने अद्भुत योग्यता का प्रदर्शन करते हुए जिस शील और सौंदर्य के साथ शक्ति का समन्वय किया है, वह अकथनीय है। इस क्षेत्र में तो मानो उन्होंने विशेषज्ञता ही प्राप्त करली है। उनके द्वारा चित्रित चरित्र शील शक्ति और सौन्दर्य के अनुपम आगार हैं, इन तीनों की त्रिवेणी अपनी अद्भुत छटा बिखरती हुई समीप के कूल किनारों रूपी कवियों और लेखकों को आकर्षित करती हुई, अपनी उज्जवल धारा से उनके हृदयस्थलों को उद्बुद्ध करती हुई शान्तभाव से वही चली जा रही है।

शीलरूप में प्रतिष्ठित करने के लिए किसी पात्र विशेष की विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण किया जाता है। उसका चरित्र विभिन्न अवसरों पर विभिन्न परिस्थितियों के बीच उद्घाटित किया जाता है और पात्रों के भावों, विचारों और आचरणों से उसका निर्णय किया जाता है। रामकाव्य के अन्तर्गत ऐसे अनेक पात्र हैं जिनके स्वभाव और मानसिक प्रवृत्ति का उद्घाटन तुलसीदासजी ने उन्हें शील रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए कई अवसरों पर उनके भावों और आचरणों की एकरूपता प्रदर्शित कर दिखाने का अविस्मरणीय प्रयास किया है। जिनका अपना कोई सानी नहीं। फिर सूर तो 'सूर' थे, किन्तु इसके पूर्व की हम सूर के शील निरूपण और चरित्र चित्रण पर विचार करें, उनकी काव्य सम्बन्धी परिस्थितियों को ध्यान में रखना अनुचित नहीं होगा।

सूरदास के 'रामकाव्य' के पात्रों को जब हम कसौटी पर कसते हैं तो सूरदास के सम्बन्ध में हम इस विचार पर आश्रित होना पड़ता है कि उन्होंने कहीं

ी चरित्रांकन का प्रयोग नहीं किया। सूरदास की रामकाव्य लिखने का प्रयोजन क मात्र उनकी रुचि ही रही है और इसी कारण उन्होंने इस प्रबन्धकाव्य के रूप न लिखकर स्वतन्त्र रूप मे प्रमुख प्रमुख घटनाओं का वर्णन करते हुए लिखा है। पनी रुचि स कवि ने कथा के मार्मिक स्थलों को चुना और उन पर न्यूनाधिक प से रचना कर अपने भावोद्गार प्रकट किये किन्तु उनके मार्मिक स्थलों पर ावमग्न हो जाने की प्र ा ने जहाँ एक ओर कथा के क्रमबद्ध निर्वाह म विरोध, त्पन्न किया है वहां दूस ा ार ा ा र ि भी पूर्ण रूप से चित्रित नहीं हो- ाये हैं। फलस्वरूप उनकी कुछ विशेषताओं का उद्घाटन मात्र ही हो ाया है।

सूर के राम

सूर के राम शक्ति, शील और सौंदय के अनन्त कोष हैं। उनके हृदय की स्निग्धता, कोमलता एवं सरसता उनके चरित्र के हर पक्ष पर दृष्टिगत होती है। श्रीराम का सौंदय कल्पनातीत है। उनके कमलनयन सुकुमारता की पराकाष्ठा है। उनके स्निग्ध कुंतल और आकर्षक पीताम्बर विश्व को मोह लेते हैं। वे पतितों का बाँह पकड़कर उद्धार करने वाले हैं और इस पृथ्वी पर उनका आविर्भाव दुष्टों का दलन करने और भक्तों का उद्धार करने के लिये प्रदर्शित किया गया है।

अनन्त शक्ति के साथ धीरता, गम्भीरता और कोमल राम का प्रधान लक्षण है। तुलसीदास जी ने 'रामचरित' म राम के इस रूप का आदि से अन्त तक निभाया है। धैर्यशाली गम्भीर और सुशील व्यक्तित्व वाला व्यक्ति कभी भी दूसरे के बुरे भाव का आरोप जल्दी नहीं कर सकता, किन्तु सूर ने इन गुणों का उत्कर्ष दिखाने की चेष्टा बहुत कम की है। इसका प्रमुख कारण यह है कि करुण और कोमल भावों के प्रति सूर की अत्यधिक रुचि रही है।

डा० हरबंसलाल ने अपने सूर और उनका साहित्य' के पृष्ठ २८६ पर लिखा है 'भगवान के शील, शक्ति और सौंदय में से हमारे कवि ने उनके सौंदय-रस की मादकता में मस्त होकर 'अनजान' जो गीत गाये, उनम न तो तुलसी के काव्य के समान शीलपालन दृढ़ता ही कठोरता है और न चारण कवियों के समान 'शक्ति' की उद्धतता और विकटता, केवल आँखों से चुपचाप बहती हुई भावधारा है, जो आराध्य के रूप दर्शन से उद्वेलित होकर मोतियों के रूप म झर झर ध्वनि से उसी के चरणों पर ढुलक जाती है।

'त्वदीय वस्तु गोविन्द तुम्यमेव समर्पये'

राम के हृदय की स्निग्धता, कोमलता और प्रेम विह्वलता प्रदर्शित करने के लिये निम्न पद द्रष्टव्य है।

'कर कंपे कंकण नहि छूटे'[१]

कंकण मोचन के समय राम का हाथ सीता के हाथ का स्पर्शकर सात्विक भाव का कम्प उत्पन्न कर देता है। फलस्वरूप राम का कोमल हृदय प्रेम के सागर में अवगाहन करने लगता है और वे कंकण नहीं छुड़ा पाते अपितु उनकी स्निग्धता और भावुकता जुआ खेलने के समय भी सीता को विजय दिला देती है।

धनुष भंग के समय सीता अपनी सखी से कहती है कि 'यह पिनाक और पिता का प्रण दोनों दुसह हैं और श्रीराम अभी किशोर हैं, उनसे यह धनुष कैसे टूट सकेगा।' अन्तर्यामी राम इस बात को जान लेते हैं और 'सिय अंदेस जानि सूरज प्रभु, लियो करज की कोर उंगलियों की नोक से ही धनुष को तोड़ देते हैं। यहाँ 'लियो करज की कोर' मे कवि ने जहाँ एक ओर उनके अतुलित बल और पराक्रम की ओर इशारा किया है, वहाँ दूसरी ओर सीता के संदेह को मिटाने और उसके हृदय स्थित मनोभावों पर विजय पाने की ओर भी संकेत किया है।

भगवान राम का अन्तर्यामी रूप एक अन्य स्थान पर भी उद्भासित हुआ है। जब लक्ष्मण राम के द्वारा वन मे जाने से मना कर दिये जाते है तब उनसे कोई उत्तर देते नहीं बनता।

लछिमन नैन नीर भरि आए।
उत्तर कहत कछु नहिं आयो रहे चरन लपटाए।
अन्तरजामी प्रीति जानि कै लछिमन लीन्हे साथ।
सूरदास रघुनाथ चले बन पिता वचन धरि माथ।

पृ० सं० ४८१

यहाँ राम, लक्ष्मण के प्रेम की गुरुता को समझकर ही उनको साथ ले लेते हैं।

परशुराम के क्रोधित वचन सुनकर सूर के राम का धैर्यशाली रूप सामने आता है। वे दोनों हाथ जोड़कर, मस्तक नवाकर, नम्रतापूर्वक उनसे कहते हैं—

---

१ वही पद ४६६

विप्र जाति रघुबीर धीर दोउ हाथ जोरि सिर नायो।
बहुत दिननि को हुतो पुरातन हाथ छुवत उठि आयो।
तुम तो द्विज कुल पूज्य हमारे हम तुम कौन लराई।

प० स० ४७२

कि यह तो बहुत दिनों का पुराना धनुष था हाथ उठाते ही टूट गया। तुम तो द्विज होने के नाते ब्राह्मण कुल पूज्य भी हो तुम्हारी हमारी क्या लड़ाई?

भरत के मुण्डित केश देखकर राम विह्वल होकर भावावेश से गद्गद होकर उन्हें कण्ठ से लगा लेते हैं। पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर राम मुरझाकर धरती पर गिर पड़ते हैं। वे प्रेम में मग्न होकर आँसुओं की झड़ी लगा देते हैं उनके हृदय का शोक आँसू के रूप में धारा से प्रवाहित होकर निकल पड़ता है इस अवस्था के चित्रण में सूर के भावुक हृदय ने समस्त नियन्त्रण और मर्यादाओं को तोड़ डाला है।

लक्ष्मण को शक्ति से आहत देखकर श्रीराम का धैर्य पलायित होजाता है। उनके अरुण कमल सदृश विशाल नेत्रों से अश्रु प्रवाह प्रवाहित हो जाता है और वे करुणार्द्र होकर गात संतप्त हो उठते हैं।

निरखि मुख राघव धरत न धीर।
भए अति अरुन विशाल कमल दल लोचन मोचत नीर।

दसरथ मरन, हरन सीता को रन बैरिन की भीर।
दूजो सूर सुमित्रा सुत बिनु कौन धरावै धीर।

प० स० १८६

इस प्रकार हम देखते हैं कि भगवान राम के कोमल हृदय की वेदना व्याकुलता और व्यग्रता का चित्रण जितनी तन्मयता और आत्मीयता के साथ विशेषकर सीता और लक्ष्मण के सम्बन्ध में सूर ने चित्रित किया है उतना उनके धैर्य पराक्रम और शौर्य के लिये नहीं। इसके साथ ही जहाँ एक ओर राम का चरित्र इतना संवेदनशील सहृदय, भावुक और स्नेहसिक्त बताया है वहीं दूसरी ओर सूरदास ने कुछ ऐसे राम के आचरण भी प्रस्तुत किये हैं जिनके फलस्वरूप उनके चरित्र की उच्चता में सन्दिग्धता सी प्रतीत होने लगती है। वे कहीं 'प्रिया प्रेम बस निज महिमा का विस्मरण दिखाते दृष्टिगोचर होते हैं कहीं अनन्त की भावना

को विस्मृत कर करुणा से पीड़ित हो उठते हैं और कहीं सीता के वियोग से दग्ध होकर आसमान को सिर पर उठा लेते हैं, वहीं दूसरी ओर जगत के उपहास से डरकर सीता से मुख मोड़ लेते हैं।

डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने अपने ग्रन्थ सूरदास के पृष्ठ २९८ ६६ पर ठीक ही लिखा है। वे राम में अपने भगवान् का वह रूप न पा सके जिसके प्रति वे पूर्ण आत्मीयता का अनुभव कर सकते। उनके रघुवीर धीर यद्यपि सीता के वियोग में करुण विलाप करते हैं और लक्ष्मण के शक्ति लगने पर सारा धैर्य खोकर बिलखने लगते हैं फिर भी उन त्रिलोक के स्वामी को जग उपहास का इतना डर है कि रावण के यहां से लौटी सीता का देखकर वे मुँह मोड़ लेते हैं और लक्ष्मण को हुतासन रचने की आज्ञा देते हैं जिसे सुनकर हनुमान के बहाने सूरदास अपने दुःख को प्रकट करके कहते हैं कि मुझसे यह दृश्य नहीं देखा जाता।'

किन्तु राम के अन्तर्गत ऐसे अनेक गुणों का बाहुल्य है जैसे गुणों का होना धीरोदात्त नायक के अन्तर्गत आवश्यक है।

१ कर्त्तव्यनिष्ठा

जटायु के प्रति सम्वेदना प्रकट करते समय राम की कर्त्तव्यनिष्ठा और अपार कृपा का आभास होता है उस समय राम अपनी वियोग जन्य अवस्था के दुःख को भूलकर 'नामहित' दौड़ पड़ते हैं।

कृपानिधान नाम हित धाए, अपनी विपति बिसारि।

पद सं० ५०६

२ शरणागति की रक्षा का भार

सूर के राम में शरणागत की रक्षा का भार उत्कृष्ट रूप से ध्वनित होता है। लक्ष्मण के शक्ति लगने पर राम विलाप करते हुए कहते हैं 'यह क्या से क्या हो गया। मैं तो अपने प्राण त्याग दूँगा और सीता भी मेरा अनुसरण कर लेगी, किन्तु मेरे हृदय में इसी बात का चिन्तन है कि विभीषण की क्या गति होगी, उसके भविष्य की चिन्ता मेरे प्राणों को संकट में डाल रही है।'

मैं निज प्रान तजौंगो सुनि कपि, तजिहि जानकी सुनिकै।
ह्वै कहा बिभीषन की गति यहै सोच जिय गुनि कै।

पद सं० ५९०

३ कृतज्ञता का भाव

राम के द्वारा कृतज्ञता का प्रकटीकरण बहुत ही उत्कृष्ट और शोभित ढंग से चित्रित किया गया है। जब वह लक्ष्मण के लिए विलाप करते हुए हनुमान से कहते हैं।

> अहो पुनीत मीत केसरि सुत, तुम हित बन्धु हमारे।
> जिह्वा रोम रोम प्रति नाहीं, पौरुष गनौ तुम्हारे।
>
> पद सं० ५६१

राम के हर रोम में जिह्वा नहीं, इसलिये वे अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहते हैं, कि तुम्हारे मेरे ऊपर अनन्त उपकार होते हुए भी मैं उनको प्रकट करने में असमर्थ हूँ। श्रीराम उन्हें अपने बन्धु सदृश महत्ता प्रदान करते हैं और उनको अपना संकट मित्र समझते हैं।

४ जन्मभूमि के प्रति प्रेम

पद ६०९ में अपनी जन्मभूमि के प्रेम का प्रकटीकरण राम ने अत्यन्त उत्साह के साथ किया है, यहाँ सूर के राष्ट्र प्रेम की झलक भी दृष्टव्य है।

> हमारी जन्मभूमि यह गाऊँ।
> सुनहु सखा सुग्रीव विभीषन अवनि अजोध्या नाउं।
> देखत वन उपवन सरिता सर परम मनोहर ठाउं।
> अपनी प्रकृति लिए बोलत हा, सुरपुर में न रहाउं।
> ह्या के वासी अवलोकन ही, आनन्द उर न समाउं।
> सूरदास जो विधि न सकोचे तो बैकुण्ठ न जाउं।

यहाँ राम आत्मविभोर होकर अपनी प्रकृति का रहस्य तक खोल देते हैं और कह देते हैं कि इस आनन्द के सम्मुख सुरपुर में रहने की इच्छा भी त्याज्य है। यहाँ के निवासियों का प्रेम असीम है जो मेरे अन्तःस्थल में नहीं समा पाता। अगर मुझे ब्रह्मा संकोच में डालकर आने के लिये बाध्य न करें तो मैं बैकुण्ठ में ही न जाऊँ। जन्मभूमि का कितना निश्छल प्रेम है जो परमात्मा को भी बाँधकर धन्य होगया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूर के राम जहाँ एक ओर भक्त वत्सल, शरणागत की रक्षा करने वाले सम्वेदनशील, कर्तव्यनिष्ठ, मर्यादाशाली सुन्दरता

एव कोमलता के आगार है वहा दूसरी ओर उनम धैय, पराक्रम, शौय, पौरुप और शील सौन्दय का अभाव मा दृष्टिगोचर होता है ।

सूर की सीता

सीता के चरित्र चित्रण और निरूपण मे भी सूरदास ने वही प्रणाली अपनाई है जिसके कारण उसका चरित्र उत्कृष्टता की चरम सीमा पर पहुचकर फिर से धरातल पर आने को मचल उठता है। फिर भी कहीं-कही सीता का चरित्र उसके आदर्शानुकूल ही चित्रित हुआ है।

राम सीता को वन गमन से रोकने के लिए उस वन की विपत्तियाँ दृष्टिगत कराते हुए जनकपुर जाने की आज्ञा देते हैं और पति की आज्ञा मानना ही उसके लिए सबसे बडा धम है, ऐसा समझाते हैं। किन्तु सीता इसका जो उत्तर देती है, वह उसकी कतव्यनिष्ठता और सुकुमारता को स्पष्ट करता है।

> ऐसो जिय न धरो रघुराई।
> तुम सो प्रभु तजि मो सी दासी, अनत न कहूँ समाई।
> तुम्हरो रूप अनूप भानु ज्यो, जब ननिन भरि देखौं।
> ता छिन हृदय कमल प्रफुलित ह्वै, जनम सफल करि लेखौं।
> तुम्हरे चरन कमल सुख सागर यह व्रत हो प्रति पलिहौं।
> सूर सकल सुख छाँडि आपनो, वन विपत्ति सग चलिहौं।
>
> प० स० ४७६

व० कहती है कि आपके चरणो म ही मेर पतिधम का आदश है। वन की विपत्तियों को मैं अपनी सहेलियों के सदृश साथ रक्खू गी। सीता का यह भाव गुप्तजी के साकेत' की 'सीता' से किसी भी प्रकार कम नहीं है। साकेत की सीता राम से कहती है।

> अथवा कुछ भी न हो वहा
> तुम तो हो जो नहो यहाँ।
> मेरी यही महामति है,
> पति ही पत्नी की गति है।

जहाँ साकेत की सीता म पति ही पत्नी की गति है वहाँ सूर की सीता मे राम के चरण कमलो में ही व्रत पालने का हठ है।

[illegible] भिन्न दृष्टि द्वारा जब अशोक वाटिका में बैठी सीता का करुणापूर्ण चित्र वर्णित करता है तो विरह विदग्ध सीता का मार्मिक स्वरूप हमारे सम्मुख प्रत्यक्ष रूप में उद्भासित हो जाता है। जिसमें उनका राम के प्रति अटूट स्नेह पूर्णरूप से परिलक्षित हुआ है।

बिछुरी मनो संग तें हिरनी।
चितवत रहति चकित चारों दिसि, उपजी बिरह तन जरनी।
तरुवर मूल अकेली ठाढ़ी, दुखित राम की घरनी।
वसन कुचील, चिहुर लपटाने, विपति जाति नहिं बरनी।
लेति उसास नयन जल भरि भरि, धुकि सों परि धरनी।
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम की सरनी।

प० स० ५१७

निस्तब्धता, अनन्यता, क्षीणता, सतर्कता, चिन्ता तथा प्रेम की पीड़ा का यह समवलित चित्र बड़ा मार्मिक है। इस चित्र में भक्त ने अपने को मिटाकर भगवान के अखण्ड प्रेम की साधना की है।[1]

जब राक्षसियां सीता को रावण के अनुकूल करने की चेष्टा करती हैं तब सीता का यह कथन उसके सच्चे पतिव्रत धर्म का जीता जागता उदाहरण प्रस्तुत करता है।

तब रावन को बदन देखिहौं दससिर सोनित न्हाय।
कै तन देउँ मध्य पावक के, कै बिलसैं रघुराइ।

प० स० ५२१

रावण के सिर रक्त की नदी में कटकर स्नान करेंगे तभी वह उनका ध्यान करेगी इसके पहले नहीं। उसका तो यही प्रण है कि या तो इस शरीर को अग्नि पा सकती है या राम तीसरा कोई नहीं।

सूर की राक्षसी रावण से भी सीता के सत्य और शील का बखान करती हुई कहती है 'धर्मराज के मन वाणी और शरीर चाहे अपवित्र हो जाय विस्मय जनक सिंधु के गम्भीर हृदय में चाहे विस्मय का क्षोभ उत्पन्न हो जाय, अचला चाहे चलने लगे चंचल पवन रक्षक चाहे थककर खड़े हो जाएँ विश्व के चिरंजीवी चाहे

---

१ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरंजन पांडेय पृष्ठ ४०५

मर जाएँ, पर रघुनाथ के प्रताप म सीता का सत्य और पतिव्रत नही टल सकता। १

यहाँ सीता के चरित्र को पवत के शिखर पर ले जाकर ग्ग्ग ग्ग दिया गया है। जिसका प्रभाव हमारे हृदय का प्रेरणा और जीवन का आशावादिता प्रदान करता है किन्तु जब यही सीता जिसे अपने पतिव्रत पर अगाध विश्वास है, जो राम को स्वय म विलग नही मानती हनुमान द्वारा सन्देश भेजती हुई कहती हैं —

सुनु कपि व रघुनाथ नहीं।
जिन रघुन थ पिनाक पिता गृह तोरयो निमिष मही।
जिन रघुनाथ फेरि भृगपति गति डारी काट नही।
जिन रघुनाथ हाथ खरदूषन प्रन हरे सरही।
क रघुनाथ तज्यो प्रन अपनो, जोगिनि दसा गही।
क रघुनाथ दुखित कानन, क नृप भए रघुकुलही।
क रघुनाथ अतुल वल राक्षस दसकंधर वेरही।
छाडी नारि विचारि पवनसुत, लक बाग बसहीं।
क हौं कुटिल, कुची।, कुलच्छनि, तजो कत तेवही।
सूरदास स्वामी सा कहियो अब विरमाहि नही।

प० स० ५३५

तो हमारी श्रद्धा विश्वास और आदर की भावना जो सीता के प्रति उत्पन्न हुई थी टूटकर चकनाचूर हो जाती है, और वह आत्मता के पवत शिखर से नीचे उतर कर मानवीय धरातल पर खडी प्रतीत होती है। जहा तुलसीदासजी ने सीता को जगज्जननी और जगत माता के रूप म देखकर उनका शृङ्गारिक वणन भी करने का साहस नही किया है और उज्ज्वल चरित्र के रग में सराबोर कर जन समाज के सम्मुख एक आदश चरित्र की सजना की है, वहाँ सूरदासजी की सीता का यह रूप, अपने पति राम के प्रति यह अविश्वास मानवीय स्वाभाविकता से पूर्ण होने पर भी उनकी सीता के प्रेम की सकीणता को ही प्रदर्शित करता है। सूर की सीता सन्देहशील है, उसे आशका है कि कही उसके राम बदल तो नहीं गये। यह सत्य है कि इसम वियोग भावना का आधिक्य है, जिसमें सूर के गोपी विरह

---

१ 'रामभक्ति शाखा रामनिरजन पाडेय पृष्ठ ४०६

विरह दुःख ने भी संयम तोड़ दिया है। परन्तु फिर भी अपने पति श्रीराम पर ही सीता का सन्देह करना उचित नहीं प्रतीत होता।

लेकिन सूर सख्यभाव से कृष्ण की भक्ति करते थे, तुलसी की तरह दास्य भाव की नहीं। यही कारण है कि उनको ये सब बातें कहने का अधिकार है जो एक सेवक के अधिकार मे नहीं अपितु मित्र के अधिकार में होता है। इनके लिये तो 'गलत न को वाको गुसाईं' की भावना पूर्णरूप से प्रतिष्ठित है यही बात उन्होंने गोपियों से भी कृष्ण के लिए कहलवा दी है जो कि गोपियों के चरित्र के लिए उपयुक्त प्रतीत नहीं होती।

हरि सों भलो सो पति सीता को।

बन बन खोजत फिरे बंधु संग किया सिंधु बीता को। [1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि चरित्र चित्रण की कमी सूर की निष्काम भावना और सख्यभाव की भक्ति से बहुत कुछ सम्बन्ध रखती है। विरुद्ध परिस्थिति उत्पन्न होने पर उनकी सीता और गोपियों का चरित्र जो प्रारम्भ से ऊपर उठता आ रहा था, कहीं-कहीं पर अवनति के गर्त में जाने लगता है।

इसी प्रकार पुरवधुओं के प्रश्न पर जहाँ गोस्वामी तुलसीदास की सीता केवल बहुरि बदन बिधु अंचल ढाँकी। प्रिय तन चितै भौंह करि बाँकी।

खंजन मंजुल तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहिं सिय सयननि।

कहकर श्रृंगारी चेष्टाओं द्वारा ही परस्पर राम से सम्बन्ध की भावना स्पष्ट कर देती है वहां सूर की सीता निस्संकोच होकर राम लक्ष्मण का परिचय पूछने पर जवाब देती है

गोर बरन मेरे देवर सखि पिय मम स्याम सरीर'।

इसके अतिरिक्त अपने वन गमन का कारण बताते हुए भी वह कहती है।

सासु की सौति सुहागिन सो सखि, अति ही पिय की प्यारी।
अपने सुत को राज दिवायो, हमको देस निकारी।'

यहाँ सीता का यह कथन अपने परिवार की मर्यादा और प्रतिष्ठा को ऊपर न उठाकर उसे चोट पहुँचाकर धराशायी ही करता प्रतीत होता है।

---

१ देखिये पद सं० ८३, भ्रमरगीत सार आचार्य शुक्ल

जहाँ तुलसीदास ने सभोग शृंगार का खुला वर्णन न कर भारतीय आदर्श की परम्परा का निबाह करते हुए, कुल वधु की प्रतिष्ठा का हर समय ध्यान रखा है, और अनेक स्थलों पर सीता को पतिव्रत धर्म की शिक्षा तक दिलवाई है जैसे 'उमाशंकर प्रसंग' 'अनसूया प्रसंग' आदि में वहाँ सूर की सीता अपने पति राम के प्रति सन्देहशील है। निस्संकोच और स्पष्टवादी है तथा उसमें कुल मर्यादा और बड़ों के प्रति आस्था रखने आदि गुणों का भी अभाव है।

वस्तुत चरित्रों का आदर्श उपस्थित करने की अपेक्षा सूर ने उनकी करुण एवं मार्मिक परिस्थितियों को ही विशेष परखा। उन्होंने विभिन्न पात्रों के भावों को अपनी सवेदना और भक्ति भावना से रंग कर चित्रित किया है।

अन्य पात्र

अन्य पात्रों के चरित्र सम्बन्धी सबलता में भी यद्यपि आदर्श की अपेक्षा मानवीय स्वाभाविकता पर सूरदास का विशेष अवधान रहा फिर भी उन्होंने ऐसा आदर्शच्युत किसी को नहीं होने दिया जिस पर आपत्ति की जा सके। १

अन्य पात्रों में भरत, लक्ष्मण, हनुमान, दशरथ, सुमित्रा कौशल्या आदि का चरित्र अपूर्व बन पड़ा है।

भरत

'भरत के समान सात्विक शील वाले व्यक्ति की उस ग्लानि से सूर सर्वथा परिचित है जो उसे किसी पाप से सम्बद्ध हो जाने पर होती है। भरत पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहे हैं, उनके लिये इससे बड़ा और कौन सा पाप हो सकता है कि जिनकी वजह से राम वन को जाय। राज्य उन्हें अग्नि के सदृश्य प्रतीत होरहा है।' २ वे कहते हैं—

'कौन काज यह राज हमारे, इहि पावक परि कौन जियौ।
लोट भूर धरनि दोउ बधु मनो तपत विष विषम पियौ।

दोनों बन्धु धरती पर इस प्रकार लोट रहे हैं मानो उन्होंने शरीर को जला देने वाला कोई विष पी लिया हो। वास्तव में यह ग्लानि जो कि सूरदास ने अपने

---

१ 'सूरदास' डा व्रजेश्वर वर्मा पृष्ठ २६५, ६६
२ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरंजन पांडेय पृष्ठ ४०३

काव्य के सीमित क्षेत्र में चित्रित का है, तुलसी के भरत के जीवन और चरित्र से किसी भी प्रकार कम नहीं है।

अपनी माता से भरत के द्वारा कही गई निम्न उक्तियाँ उनका 'राममय हृदय' व्यक्त करती हुई प्रकट होती है।

राम जू कहा गए री माता।
सूनो भवन सिंहासन सूनो, नाहीं दसरथ ताता।
धृग तव जन्म, जियन धृग तेरो,कही कपट मुख बाता।
सेवक राज नाथ बन पठए, यह कब लिखी विधाता।
मुख अरविंद देखि हम जीवत, ज्यों चकोर ससि राता।
सूरदास श्रीरामचन्द्र बिनु कहा अयोध्या नाता।

पृ० सं० ४६३

भरत तो श्रीराम के बिना अयोध्या से भी अपना कोई सम्बन्ध नहीं समझते। रामनिरंजन पांडेय ने 'राममक्ति शाखा' के पृष्ठ ४०३ ४०४ में ठीक ही लिखा है। सूरदासजी के भरत का जीवन और अस्तित्व तुलसी के भरत के समान ही राममय है। गोस्वामी जी को अपने भरत को प्रस्तुत करने के लिये मानस में पर्याप्त स्थान और अवकाश मिला है। सूर को कुल १५८ पदों में पूरी मावात्मक रामायण प्रस्तुत करना है। सूर ने 'मानस के हृदय को पूर्णत अवित करलिया है। उसका कोई स्पन्दन सूर के हृदय से अनुभूत नहीं रह पाया है।'

लक्ष्मण

सूर लक्ष्मण को शेष का अवतार मानते हैं। क्योंकि जब सीता के वियोग से व्याकुल होकर राम आवेग में सहारा पाने के लिये लक्ष्मण के हृदय से लग जाते हैं उस समय 'लगत सेष उर बिलखि जगत गुरु' कहकर सूरदास ने उनका स्वरूप स्पष्ट कर दिया है।

यह जानकर कि राम लक्ष्मण को अयोध्या में ही छोड़ जाना चाहते हैं सूर के लक्ष्मण की आँखें भर आती हैं। वे कुछ नहीं बोल पाते। राम के चरणों से लिपट जाने के सिवा उन्हें और कुछ न सूझा। यहां उनका असीम प्रेम दृष्टव्य है। 'नव कही बैननि अनेक नहा नाननि सा रहि गहि गाई कहि दीठी भ गुरुन सो रत्नाकर' की ये पंक्तियाँ पूर्णरूप से चरितार्थ होती है।

हनुमान

हनुमान के रूप म तो स्वय सूरदासजी की वाणी ही प्रस्फुटित हो उठी है। नका भक्त हृदय जो श्रीराम के साथ अधिकाधिक आत्मीयता का इच्छुक ह, नुमान म इतनी मुखरता का समावेश कर सका है। जब श्रीराम की कातरवाणी नाथ की भाँति पुकार उठती है।

कहाँ गयौ मारुत पुत्र कुमार। प० स० ५६१

भगवान की यह कातरवाणी सुनकर सूरदासजी का भक्त हृदय फूल उठा। इतने भारी विश्वास को प्राप्त करके वे हनुमान के मुख से दृढतापूर्वक बोल उठे।

रघुपति मन सन्देह न कीजै। १

यहाँ हनुमान का पौरुष उनका आत्मविश्वास सराहनीय है। व तो मात्र इतना चाहते हैं कि भगवान राम उनके सहायक हो, शेष व सब निबट लेंग।

कौशल्या

कौशल्या के रूप म यशोदा का मातृत्व ही मानो उतर आया है। आचाय रामचन्द्र शुक्ल के कथनानुसार सूर वात्सल्य का कोना-कोना भाक आये हैं लेकिन हमारे ध्यान मे उन्होने मातृ हृदय का भी शायद ही कोई कोना छोडा हो। उनके द्वारा चित्रित कौशल्या का चरित्र बहुत ही सजीव रूप मे अकित हुआ है।

राम वन गमन के समय मातृ हृदय का स्वरूप दृष्टव्य है। कौशिल्या राम को रोकना चाहती हैं, लेकिन राम तृण के समान अपने स्नेह को तोडकर वन पथ पर बढ जाते हैं। तब वह अपने व्याकुल हृदय को रोककर कहती हैं।

रामहिं राखौ कोऊ जाइ।

जब लगि भरत अजोध्या आव, कहत कौसिला माइ।

प० स० ४६१

जब तक भरत अयोध्या न लौट आवें तब तक के लिये ही कवल राम रुक जावें उसे इसी म सन्तोष है। ताकि वह रामविहीन हृदय को भरतमय देखकर ही अपने हृदय की थोडी व्याकुलता को कम अनुभव कर सकेगी।

---

१ देखिये पद सख्या ५६२

काव्य में सीमित क्षेत्र में चित्रित भरत का है तुलना में भरत के जाना किसी भी प्रकार कम नहीं है।

अपनी माता से भरत के द्वारा कही गई निम्न उक्तियाँ हृदय व्यक्त करती हुई प्रकट होती है।

राम जू कहाँ गए री माता।
सूनो भवन सिंहासन सूनो, नाहीं दसरथ ताता
धृग तव जन्म, जियन धृग तेरो,कही कपट मुख बाता
सेवक राज, नाथ बन पठए यह कब लिखी बिधाता
मुख अरविंद देखि हम जीवत, ज्यों चकोर ससि राता।
सूरदास श्रीरामचन्द्र बिनु कहा अयोध्या नाता
१८

भरत तो श्रीराम के बिना अयोध्या से भी अपना कोई समझते। रामनिरंजन पांडेय ने 'रामभक्ति शाखा' के पृष्ठ ४०३ ४० लिखा है। सूरदासजी के भरत का जीवन और अस्तित्व तुलसी के ही राममय है। गोस्वामी जी को अपने भरत को प्रस्तुत करने के पर्याप्त स्थान और अवकाश मिला है। सूर का कुल १५८ पदों में रामायण प्रस्तुत करना है। सूर ने 'मानस के हृदय को पूर्ण … कि उसका कोई स्पन्दन सूर के हृदय से अनुभूत नहीं रह पाया है।'

लक्ष्मण

सूर लक्ष्मण को नाग का अवतार मानते हैं। क्योंकि जब … से व्याकुल होकर राम आवेश में सहारा पाने के लिये लक्ष्मण के हृ… हैं उस समय 'लगत सेष उर बिनखि जगत गुरु' कहकर सूरदास स्पष्ट कर दिया है।

यह जानकर कि राम लक्ष्मण को अयोध्या में ही छोड जाना … के लक्ष्मण की आँखें भर आती हैं। वे कुछ नहीं बोल पाते। रा… लिपट जाने के सिवा उन्हें और कुछ न सूझा। यहाँ उनका असीम … 'नक कही बननि अनेक कही ननिनि सा रटि सहि साई कहि दी… 'रत्नाकर' की ये पंक्तियाँ पूर्णरूप से चरितार्थ होती है।

मारूत सुतहिं सदेस सुमित्रा ऐसे कहि समुझावै ।
सेवक जूझि पर रन भीतर ठाकुर तउ घर आवै ।
जब त तुम गवने कानन कौं,भरत भोग सब छाडे ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु,दुख समूह उर गाढ़े ।

प स ५९८

हृदय के इस मूक सौन्दय का वणन सचमुच मुखरवाणी को भी मूक कर देता है इसको शक्ति का अनुमान लगाना असाध्य होने के साथ साथ अत्यन्त दुष्कर भी है।

इसके अतिरिक्त सूर ने दशरथ, मन्दोदरी, रावण आदि का चरित्र भी अद्भुत रूप से सवारा है उनके द्वारा चित्रित चरित्र बहुत ही सजीव बनपडे हैं। उनम सिफ एक ही अभाव है और वह है--चरित्राकन के प्रयास की कमी । जहाँ एक ओर रावण अशोक वाटिका मे सीता की रक्षक निशाचरी से स्वय कहता है।

'जो सीता सत ते बिचरै तौ श्रीपति काहि सभार।
मोसे मुग्ध महापापी को कौन क्रोध करि तारै।
ये जननी, वे प्रभुनन्दन, हौं सेवक प्रतिहार।
साता राम सूर सगम बिनु, कौन उतारै पार।

प स ५२२

वही अगले पद मे क्षण भर बाद यही रावण सीता को पटरानी बनाकर चौन्ह सहस्र किन्नरियों को दासी बनाने का प्रलोभन देता है।

जनकसुता, तू समुझि चित्त मे, हरषि मोहिं तन हेरि।
चौन्ह सहस किन्नरी जेती, सब दासी हैं तेरी।

प स ५२३

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राम कथा म सूरदास चरित्राकन का प्रयास नही करते। विभिन्न पात्रो के भावो को वे अपनी सवेदना और भक्ति भावना से रग कर चित्रित करते हैं। १

इसका प्रमुख कारण यही है कि उन्होने रामकाव्य, इसके मार्मिक स्थलो को चुनकर ही लिखा है और उसमे व्यक्तिगत भावानुभूति का पुट दिया है । राम की कथा पूर्वापर प्रसग के साथ कहना उनका अभीष्ट नही था, उनके चरित्र साधारणत मानवत्व से ईश्वरत्व की ओर बढ़ते हैं उनका प्रत्येक साधारण पात्र भी एक आदश बन जाता है, यह उनके चरित्र चित्रण की एक प्रमुख विशेषता है।

---

१ 'सूरदास' डा ब्रजेश्वर वर्मा पष्ठ २९७

लक्ष्मण शक्ति का समाचार सुनकर कौशल्या वात्सल्य से बाध्य होकर अपना सिर पीटने लगती हैं और राम के पास यह सन्देश कहलवाकर भेजती हैं कि—

'इहि पुर जन आवहि मम बत्सल बिनु लछिमन लघु भ्रात ।

वे अपने राम से भी अधिक लक्ष्मण को चाहती हैं। वह दोनों के लिये काग से सगुन विचार करती हुई कहती हैं—

बैठी जननि करत सगुनौती।
लछिमन राम मिले अब मोको दोउ अमोलक मोती।

अब क जा परचौ करि पावौ अरु देखौ भरि आँखि।
सूरदास सोने के पानी मढौं चोंच अरु पाँखि।

पद सं० ६०८

यहाँ कौशल्या का कितना स्वाभाविक और निश्छल प्रेम छलछला रहा है, जैसे पुत्र की कुशल चाहने के लिए एक भारतीय नारी का मातृ हृदय सगुन मनाया करता है।

सुमित्रा

सुमित्रा का चरित्र सूरदासजी ने उच्चता के शिखर पर प्रतिष्ठापित कर दिया है। जिसमें सूर का सूरत्व' दृष्टव्य है सूर की सुमित्रा सत्य की कठोर परीक्षा में खरा उतरती है। उसका धैर्य और साहस निस्सदेह धन्य है। उसका पुत्र प्रेम उत्कृष्ट है जो कि सामान्य मातृ हृदय का लक्षण है किन्तु वह साकेत की उर्मिला के सदृश्य विपत्ति के इस अवसर पर रणचण्डी बन जाती है। लक्ष्मण के शक्ति से आहत हो जाने पर वह निर्भीक होकर कहती है।

धन्य सुपुत्र पिता पन राख्यौ, धनि सुबन्धु कुल लाज।
सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु के काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ,धनि लछिमन,रामकाज जो आवै।
सूर जियैं तौ जग जस पावै मरि सुरलोक सिधावै।

पद सं० ५६५

इतना ही नहीं कौशल्या के यह कहने पर कि यदि राम अयोध्या आयेंगे तो मुझे लज्जित होना पड़ेगा सुमित्रा कहती हैं—

मारुत सुतहि सदेस सुमित्रा एसे कहि समुझावै ।
सबक जूझि पर रन भीतर, ठाकुर तउ घर आवै ।
जब त तुम गवने कानन कौं,भरत भोग सब छाडे ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु,दुख समूह उर गाढे ।

प स ५६८

हृदय के इस मूक सौन्दय का वणन सचमुच मुखरवाणी को भी मूक कर देता है इसकी शक्ति का अनुमान लगाना असाध्य होने के साथ-साथ अत्यन्त दुष्कर भी है।

इसके अतिरिक्त सूर ने दशरथ, मन्दोदरी, रावण आदि का चरित्र भी अद्भुत रूप से सवारा है उनके द्वारा चित्रित चरित्र बहुत ही सजीव बनपडे हैं। उनम सिर्फ एक ही अभाव है और वह है—चरित्राकन के प्रयास की कमी । जहाँ एक ओर रावण अशोक वाटिका मे सीता की रक्षक निशाचरी से स्वय कहता है।

'जो सीता सत ते बिचलै तो श्रीपति काहि सभारै।
मोसे मुग्ध महापापी कौ कौन क्रोध करि तारै।
ये जननी, वे प्रभुनन्दन, हौं सेवक प्रतिहार।
सीता राम सूर सगम बिनु, कौन उतारै पार।

प स ५२२

वही अगले पद मे क्षण भर बाद यही रावण सीता को पटरानी बनाकर चौदह सहस्र किन्नरियों को दासी बनाने का प्रलोभन देता है।

जनकसुता, तू समुझि चित्त म हरषि मोहि तन हरि।
चौदह सहस्र किन्नरी जेती, सब दासी हैं तरी।

प स ५२३

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राम कथा म सूरदास चरित्राकन का प्रयास नहीं करते। विभिन्न पात्रों के भावो को वे अपनी सवेदना और भक्ति भावना से रग कर चित्रित करते हैं। १

इसका प्रमुख कारण यही है कि उन्होंने रामकाव्य, इसके मार्मिक स्थलो को चुनकर ही लिखा है और उसम व्यक्तिगत भावानुभूति का पुट दिया है । राम की कथा पूर्वापर प्रसग क साथ कहना उनका अभीष्ट नहीं था, उनके चरित्र साधारणत मानवत्व से ईश्वरत्व की ओर बढ़ते हैं उनका प्रत्येक साधारण पात्र भी एक आदर्श बन जाता है, यह उनके चरित्र चित्रण की एक प्रमुख विशेषता है।

१ 'सूरदास' डा व्रजेश्वर वर्मा पृष्ठ २६७

लक्ष्मण शक्ति का समाचार सुनकर कौशल्या वात्सल्य से बाध्य होकर अपना सिर पीटने लगती हैं और राम के पास यह संदेश कहलवाकर भेजती हैं कि—

'इहिं पुर जन आवहिं मम वत्सल बिनु लछिमन लघु भ्रात'।

वे अपने राम से भी अधिक लक्ष्मण को चाहती हैं। वह दोनों के लिये ही कौए से सगुन विचार करती हुई कहती हैं—

बैठी जननि करत सगुनौता।
लछिमन राम मिलैं अब मोको दोउ अमोलक मोती।

अब के जौ परचौ करि पावौ अरु देखौ भरि आँखि।
सूरदास सोने के पानी मढ़ौ चोंच अरु पाँखि।

पृ० स० ६०८

यहां कौशल्या का कितना स्वाभाविक और निश्छल प्रेम छलछला रहा है, जैसे पुत्र की कुशल चाहने के लिए एक भारतीय नारी का मातृ हृदय सगुन मनाया करता है।

सुमित्रा

सुमित्रा का चरित्र सूरदासजी ने उच्चता के शिखर पर प्रतिष्ठापित कर दिया है। जिसमें सूर का सूरत्व' दृष्टव्य है सूर की सुमित्रा सत्य की कठोर परीक्षा में खरी उतरती है। उसका धैर्य और साहस निस्सदेह धन्य है। उसका पुत्र प्रेम उत्कृष्ट है जो कि सामान्य मातृ हृदय का लक्षण है किन्तु वह साकेत की उर्मिला के सदृश्य विपत्ति के इस अवसर पर रणचण्डी बन जाती है। लक्ष्मण के शक्ति से आहत हो जाने पर वह निर्भीक होकर कहती है।

धन्य सुपुत्र पिता पन राख्यौ, धनि सुबधू कुल लाज।
सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु के काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ, धनि लछिमन, रामकाज जो आवै।
सूर जियैं तौ जग जस पावै मरि सुरलोक सिधावै।

पृ० स० ५६५

इतना ही नहीं कौशल्या के यह कहने पर कि यदि राम अयोध्या आयेंगे तो मुझे लज्जित होना पड़ेगा सुमित्रा कहती है—

मारुत सुतहिं सदस सुमित्रा ऐसे कहि समुझावै।
सेवक जूझि परै रन भीतर ठाकुर तउ घर आवै।
जब त तुम गवने कानन कौं,भरत भोग सब छाड़े।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु,दुख समूह उर गाढ़े।

प स ५६८

हृदय के इस मूक सौन्दर्य का वर्णन सचमुच मुखरवाणी का भी मूक कर देता है इसको शक्ति का अनुमान लगाना असाध्य होने के साथ-साथ अत्यन्त दुष्कर भी है।

इसके अतिरिक्त सूर ने दशरथ, मन्दोदरी, रावण आदि का चरित्र भी अद्भुत रूप से सवारा है उनके द्वारा चित्रित चरित्र बहुत ही सजीव बनपड़े हैं। उनमे सिर्फ एक ही अभाव है और वह है—चरित्राकन के प्रयास की कमी। जहाँ एक ओर रावण अशोक वाटिका मे सीता की रक्षक निशाचरी से स्वय कहता है।

'जो सीता सत ते बिचलै तो श्रीपति काहि सभार।
मोसे मुग्ध महापापी को कौन क्रोध करि तार।
ये जननी, वे प्रभुनन्दन, हो सेवक प्रतिहार।
सीता राम सूर सगम बिनु कौन उतारै पार।

प स ५२२

वही अगले पद म क्षण भर बाद यही रावण सीता को पटरानी बनाकर चौन्ह सहस्र किन्नरियो का दासी बनाने का प्रलोभन देता है।

जनकसुता, तू समुझि चित्त म, हरषि मोहिं तन हेरि।
चौन्ह सहस किन्नरी जेती, सब दासी है तेरी।

प स ५२३

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि राम कथा म सूरदास चरित्राकन का प्रयास नहीं करते। विभिन्न पात्रो के भावो को व अपनी सवेदना और भक्ति भावना से रग कर चित्रित करते हैं। १

इसका प्रमुख कारण यही है कि उन्होंने रामकाव्य, इसके मार्मिक स्थलो को चुनकर ही लिखा है और उसमे व्यक्तिगत भावानुभूति का पुट दिया है। राम की कथा पूर्वापर प्रसग के साथ कहना उनका अभीष्ट नही था, उनके चरित्र साधारणत मानवत्व से ईश्वरत्व की ओर बढ़ते हैं, उनका प्रत्येक साधारण पात्र भी एक आदर्श बन जाता है, यह उनके चरित्र चित्रण की एक प्रमुख विशेषता है।

१ 'सूरदास' डा ब्रजेश्वर वर्मा पष्ठ २६७

रदास की उपासना और भक्ति पद्धति

सूरदास की उपासना और भक्ति पद्धति

सूरदासजी ने अपने रामकाव्य सम्बन्धी पदों में उपासना का जो ढग अपनाया है उससे तो हमे यही प्रतीत होता है कि उन्होंने राम और कृष्ण की एकता स्वीकार करली है। सूर ने राम और कृष्ण की आराधना अभेदोपासना के आधार पर की है। क्योंकि नवम स्कन्ध के अतिरिक्त भी 'सूरसागर' म प्राय ६८ पदो में राम की चर्चा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हुई है।

सूरदासजी ने श्रीमद्भागवत को अपने काव्य का आधार बनाया है किन्तु वर्णित कथाक्रम को छोडकर जहाँ कवि का हृदय भावुक बनकर बहा है वहा भावत रग की उच्चतम सीमा चित्रित हो उठी है और श्रीमद्भागवत की तरह इतिवृत्ता त्मकता नहा आ पाई है। इस कसौटी पर जब हम नवम स्कन्ध के रामावतार सम्बन्धी पदो का निरीक्षण करते हैं तो हम देखते हैं कि रामावतार से सम्बद्ध प्रथम पद को छोडकर शेष १५७ पद भावात्मक हैं। १

सूरदासजी का भक्ति सिद्धांत भी चतुश्लोकी भागवत के सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए ज्ञान, विज्ञान तथा भक्ति के समन्वय के आधार पर निर्मित है।

प्रथम ज्ञान, विज्ञानक द्वितियमत तृतीय भक्ति को भाव।
सूरदास सोई समष्टि करि व्यष्टि दृष्टि मन लाव।

ज्ञानमत ब्रह्म के अद्वैत को मानता है। ज्ञानमत की अभिव्यक्ति पहिले ही हो तब एक अमल, अकल अज भेदविवर्जित सुनि विधि विमल विवेक से होती है। ज्ञानमत विमल विवेक के द्वारा ब्रह्म के एक, अमल अकल, अज और भेद विवर्जित रूप को देखता है। विज्ञानमत समत्वदर्शी है। वह बहुत्व म समत्व का दर्शन करता है। उसकी अभिव्यक्ति 'सो हौं एक अनेक भाँति करि सोमित नाना भेष के रूप में होता है। २

सूर ने ज्ञान या योगमार्ग को सकीर्ण कठिन और नीरस तथा भक्तिमार्ग को विशाल, सरल और सरस कहा है। ज्ञान या योग का अभ्यासी विश्व की विभूति से अपनी वृत्ति समेटकर अ तमु ख हो जाता है। इसलिए गुह्य, रहस्य एव

१ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरजन पाडेय पृष्ठ ३६६

२ 'रामभक्ति शाखा' रामनिरजन पाडेय पृष्ठ ३६८

अनाथ की भांति पुकारती है। 'मारुत पुत्र कहा गया, वही मेरा सकट मित्र है' और कहीं इसी कातर वाणी को भावना के साथ गे सम्फर उनका भक्त हृदय फूल उठता है और वे हनुमान के मुख म दृढ़तापूर्वक वा। उठो है। रघुपति मन सदेह न कीज हनुमान मे इस उत्साह का, इस मुखरता का समावेश सूरदास का भक्त हृदय ही कर सकता था, जो अपने भगवान के साथ अधिकाधिक आत्मीयता का इच्छुक है।

सूरदासजी की भक्ति भावना की दृढता और उसका आग्रह हमे उस समय भी दृष्टिगत होता ह, जब मन्दोदरी रावण को बार बार अपशब्द कहकर उसे दातो म तृण दबाकर रघुनाथ की शरण जाने का उपदेश देती हैं।

> कहति मन्दोदरि, सुनु पिय रावन मेरी बात अगा।
> तृन दसननि से मिलि दसकधर कठनि मेलि पगा।
> सूरदास प्रभु रघुपति आए दहपट होइ लका।

प स ५५८

यहाँ मन्दोदरी तो उनका उपलक्षण मात्र है। वस्तुत सूरदास की भक्ति की दृढता और प्रिय के सम्मुख घिघियाते हुए नाना ही प्रतीत होता है। भक्त की परवशता और आत्मोत्सर्ग को देखकर उनके करुणावत्सल हरि उन्हे अवश्य अपने अक से लगा लेंगे।

सूरदासजी की सवभावव्यापिनी भक्ति भावना रावण म भी समाए हुए हैं फलस्वरूप सूरदास उसका भी उद्घाटन रावण में प्रदर्शित किए बिना नहीं रह पाते। उनका रावण सीता को हर कर ले जाते समय डरे डर कर चलता है मानो कोई रक महानिधि पाकर भयभीत हो।

> हरि सीता ल चल्यौ डरत जिय मानों रक महानिधि पाई।

प स ५०३

और अन्त मे वह सीता की रक्षक निशिचरी से कहकर अपना भक्त हृदय खोलकर रख ही देता है।

> ये जननी वे प्रभु रघुनन्दन हौं सेवक प्रतिहार।
> सीताराम सूर सगम बिनु कौन उतारै पार।

प, स ५२२

उनका रावण भी मुक्ति का इच्छुक है, और भक्ति भावना का एक अश अपने हृदय स्थान में सजो कर रखता है।

राक्षसों के बीच घिरी सीता उस भाव की प्रतीक है जो संसार की नाना बाधाओं और विपत्तियों से आत्मरक्षा करता हुआ अत्यन्त दीनतापूर्वक भगवान से विश्वासपूर्वक याचना करता है। राम को सन्देश भेजते हुए सीता कहती है। 'कपि तुम स्वयं यह गति देखे जाते हो मैं क्या संदेश कहूँ। कब तक मैं अपने प्राणों का पहरा जगाती रहूं, इतनी बात तुम्हे बताते हुए भी संकोच लगता है क्योंकि मेरे कंत करुणामय प्रभु ने कभी मेरा दुःख नहीं सुना। १

सीता के पति सूरदास के ही करुणामय भक्तवत्सल हरि हैं, सीता ने बहाने से अपनी वियोग व्यथा व्यक्त करते हैं।

कहियो कपि, रघुनाथ राज सों, सादर यह इक बिनती मेरी।
नाहीं सही परति मोपै अब, दारुन त्रास निसाचर केरी। २

चरणों की आराधना करने से भगवान अति सुगम हो जाता है। सीता ने चरणों की आराधना की और उसके लिए राम मृग के पीछे पीछे दौड़े। जीव के भीतर की अनन्त पवित्रता, अनन्त पवित्र भगवान को भी अपने वश में कर लेती है। यह सिद्धान्त सूर का अत्यन्त प्रिय है।

पावन सृजत, सहारत, सतत, अंड अनेक अवधि पल आधे।
सूर भजन महिमा दिखरावत इमि अति सुगम चरन आराधे।

प स ४०२

सूर को यह सिद्धान्त भी प्रिय है कि राम के चरणों के प्रताप से ही सब कुछ होता है। राम के चरणों के प्रताप से ही हनुमान सीता को खोज सके राम के चरणों की कृपा से ही लंका जली और राम की चरणपादुका सिर पर रहने के कारण ही भरत भरत हो सके। देवता लोग इन्हीं चरणों की आराधना करते हैं, इन्हीं चरणों को पकड़कर विभीषण लंका के राजा हुए और इन्हीं चरणों की धूल से अहिल्या का उद्धार होगया।

सूर ने भी लक्ष्मण को शेष का अवतार माना है। सीता के विरह से व्याकुल होकर जब राम, भावना में सहारा पाने के लिये लक्ष्मण के हृदय से लग जाते हैं तब 'लगत शेष उर बिलखि जगत गुरु कहार' इस भाव को सूरदास प्रकट करते हैं।

---

१ सूरदास डा० ब्रजेश्वर वर्मा पृ० २६८

२ देखिये पद संख्या ५३७

भक्त के प्रेम के वश होकर भगवान अपनी महिमा को भी भूल जाता है, सूर के हृदय ने इस भावात्मक सत्य का अनुभव कर लिया है।

हरि और हर की समन्वित उपासना पद्धति की ओर भी सूर ने अपने रामराज्य मे सकेत किया है। त्रिजटा से वार्तालाप के बीच म सूर की सीता कहती है कि वह दिन कब आयगा जब रावण को मारकर राम उसके दसों सिरो को शिव को चढा देंगे। यहाँ राम को सीता शिव के उपासक की तरह प्रस्तुत करती है, तथा उनके सत्य मे भास्कर तेज की उपासना सूर भी कर लेते हैं।

जा दिन राम रावनहि मार ईसहि ले दससीस चढ़ै हैं।
ता दिन सूर राम प साता सरबस वारि बधाई दैहैं।

प स ५२५

सूरदास ने कुछ स्थलो पर राम और कृष्ण की अभेदोपासना प्रस्तुत की है। भगवान राम के जन्मोत्सव क समय सूरदास प्रथम पद मे ही 'प्रकटे स्याम शरीर' में श्लेष का आधार लेकर जहाँ एक ओर उनके श्याम रग की ओर सकेत करते हैं वहा दूसरी ओर अपने आराध्य श्रीकृष्ण की ओर सकेत करना भी वे नहीं भूलते। वस्तुत राम उनके श्याम के ही दूसरे रूप हैं।

सूरदासजी ने सूरसागर म राम और कृष्ण की अभेदोपासना के आधार पर उपासना की है, इसम कोई सन्देह नहीं। दशम सग मे २ बडे कोमल स्थल हैं जहाँ कृष्ण ही राम होगये हैं। बालकृष्ण को माता सुला रही हैं। यह कहानी कहने लगती हैं। 'रघु के वशज राजा दशरथ के ४ पुत्र हुए। उनमे मुख्य राम थे, जिनकी सुन्दर और सुशील रानी सीता थी। उन्होने पिता की आज्ञा से घर छोड दिया और वन को अपने छोटे भाई और स्त्री के साथ प्रस्थान किया। कमल के समान नेत्र वाले उदार हृदय राम स्वर्ण मृग के पीछे सीता के आग्रह पर गये। इसी बीच रावण सीता को चुरा ले गया।' इतना सुनते ही श्रीकृष्ण की नीद उचट गई और वे बोल उठे।

चाप चाप करि उठे सूर प्रभु लछिमन देहु जननि भ्रम भारी।

प स ८१६

ऐसा ही दूसरा दृश्य सूरसागर के ८१७ वे पद में भी वर्णित हुआ है। इस तरह बडे कोमल ढग से महात्मा सूरदास ने राम और कृष्ण की अभेदोपासना यत्र तत्र की है। सूरसागर मे कृष्ण का महत्व प्रथम रूप म होते हुए भी श्रीमद्

भागवद् के अनुवादित कथानक के रूप में रामोपासना भी कम महत्वपूर्ण रूप में चित्रित नहीं हुई है। नवम स्कन्ध में तो श्रीमद्भागवत् की शैली का अनुसरण करते हुए सूरदासजी ने रामावतार का वर्णन किया है पर अन्यत्र भी उन्होंने राम को मनो दृष्टि से दूर नहीं होने दिया है। नवम स्कन्ध के पद १८ से १७२ तक के १५८ पदों के अतिरिक्त भी सूरसागर में प्राय ६८ पदों में राम की चर्चा प्रसंग या अप्रसंग रूप से हो जाती है।

इस युग धर्माचरण करते हुए भी मनुष्य पूर्णरूप से भवसागर नहीं हो सकता। हरि की कृपा ही उसका एक मात्र सहारा है। दीनभाव से सूरदास उसी को प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करते हैं। अपने भक्तों को स्मरण करके अपनी पतितावस्था का उत्कृष्ट अनुभव करते व अपने दोषों को अधिकाधिक रूप में कहने का प्रयास करते हैं तभी तो उन्हें हरि भगवान की कृपा प्राप्त हो जाती है। इसलिए वे रावण को मुँह में तृण रखकर प्रभु की शरण जाने का उपदेश मन्दोदरी द्वारा दिलाते हैं।

सूरदास के विनय के पदों में जहाँ एक ओर संसार की असारता मनुष्य की पतनोन्मुखता और उनकी दीनता हीनता का वर्णन है, वहीं दूसरी ओर भगवान की शरणागत वत्सलता और कारण रहित कृपा के सहारे उनके चरणों के प्रति उत्कृष्ट अनुराग व्यक्त किया गया है।

सूरदास यह भी मानते हैं कि भगवान का प्रत्येक व्यवहार उनकी भक्त वत्सलता का ही उदाहरण है। रामावतार में अहिल्योद्धार, शबरी उद्धार, विभीषण उद्धार आदि उनकी भक्त हितैषिता के प्रमाण हैं।

हरि की कृपा इन भक्तों तक ही सीमित नहीं है जो वैरभाव से भी हरि को भजते हैं हरि उन्हें भी परम पद प्रदान करते हैं। रामावतार के रावणादि राक्षस इसी प्रकार के भक्त थे। कृष्ण द्वारा मारे गये राक्षसों को भी परमगति उपलब्ध हुई थी। पूतना को भगवान ने अपनी जाती की गति देकर निजधाम भेज दिया।

> बदन निहारि प्रान हरि लीना, परी राक्षसी जोजन लाई।
> सूरज दे जननी गति ताकौं, कृपा करी निज धाम पठाई।

पद सं ६६८

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूर की उपासना और भक्ति पद्धति के दर्शन हमें कुछ भिन्न रूप में उनके राम सम्बन्धी पदों मे मिलते हैं। यहाँ उनका सखा

भाव दास्यभाव में परिणत होना सा प्रतीत होता है। अन्तिम पद में तो ये विनय-पत्रिका के पद के समान ही स्वयं को आराध्य से मिलने को उत्सुक दिखाकर उनका दर्शन करने की चेष्टा करते दृष्टिगत होते हैं, किन्तु उनकी व्यस्तता के फलस्वरूप न मिलने के कारण अपना रुक्का भेजकर सारा मामला उन्हीं पर छोड़ देते हैं।

इसके अतिरिक्त सूरदास ने अपने राम को कहीं भी मर्यादा च्युत नहीं होने दिया है। उनका आदर्श रूप ही हमेशा उनके दिव्य चक्षुओं में उभरा है। साथ ही अन्य पात्र भी जिनमें भरत, कौशल्या, सुमित्रा आदि हैं, साक्षात आदर्श की प्रतिमूर्ति ही हैं।

सूर के रामकाव्य का भाव पक्ष एवं कला पक्ष

सूर के राम काव्य का भावपक्ष एव कला पक्ष

काव्य के २ स्वरूप शुक्लजी ने उपस्थित किये हैं। प्रथम अनुकृत या प्रकृत तथा द्वितीय अतिरजित या प्रगीत लिरिक्ल इनम प्रथम स्वरूप को भावपक्ष शेष अन्य को कलापक्ष भी कह सकते हैं। कवि की भावुकता उसकी आत्माभिव्यजकता एव जीवन के अनेक मम पक्षों की समवेदना और उनकी सच्ची झलक प्रथम स्वरूप मे ही दृष्टिगोचर होती है। अपनी व्यक्तिगत सत्ता की अलग भावना से हटाकर निज के योगक्षेम के सम्बन्ध से मुक्त करके जगत के वास्तविक दृश्य और जीवन की वास्तविक दशाओ में जो हृदय समय-समय पर रमता रहता है वही सच्चा कवि हृदय है। सच्चे कवि वस्तु व्यापार का चित्रण बहुत बढा चढा और चटकीला कर सकते है, भावो को व्यजना अत्यन्त उत्कष पर पहुचा सकते हैं पर वास्तविकता का आधार नहीं छोडते। १

उनके द्वारा चित्रित चित्र इसी भाव जगत के होते हैं और उनको जीवन क्षेत्र से अलग खडा करके नहीं देखा जा सकता।

काव्य का दूसरा स्वरूप अतिरजित प्रगीत वस्तु वणन तथा भाव व्यजना दोनो मे पाया जाता है। शुक्लजी ने इसको स्पष्ट करते हुए लिखा है। कुछ कवियो की प्रवृत्ति रूपों और व्यापारों की ऐसी योजना की ओर होती है जैसी सृष्टि के भीतर नही दिखाई पडा करती। उनकी कल्पना कभी स्वणकमलो से कलित सुधा सरोवर के फूलो पर मलयानिलस्पंदित पाटलों के बीच विचरती है, कभी मरकत भूमि पर खडे मुक्ताखचित प्रवाल भवनों म पुष्पराग और नीलमणि के स्तम्भो के बीच हीरे के सिहासनो पर जा टिकती है, कभी साय प्रभात के कनकमेखला मडित विविध वणमय घनपटलों के परदे डालकर विकीण तारकसिक्त कणो के बीच बहती आकाश गगा मे अवगाहन करती है। इस प्रकार की कुछ रूपयोजनाए प्राचीन आख्यानो मे रूढ होकर पौराणिक माइथालाजिकल होगई हैं और मनुष्य की नाना जातियो के विश्वास से सम्बन्ध रखती हैं जस सुमेरु पवत सूय चन्द्र के पहिया वाला रथ, समुद्रमथन, समुन्लघन सिर पर पहाड़ लाकर आकाश माग स उडना इत्यादि। २

१ गोस्वामी तुलसीदास रामचन्द्र शुक्ल पष्ठ ५६

२ " , ६७

काय व उपयुक्त दोना ढगा म पुत्र प्रक्रिया ना भुराव अलौकिक या अतिरजित की ओर अधिक रहता है और किसी का अनुकृत या प्रकृत की ओर। मुक्तक का य के अ नगत अतिरजित या प्रगीत स्वरूप, भाव यजना के लिए अधिक प्रयोग किया जाता है जो कि विशेषत शृ गार या प्रम सम्बन्धी भाव व्यजित करने म कवियो ने प्रमुख रूप से प्रयोग किया है। फलस्वरूप 'कहीं विरहताप स सुलगते हुए शरीर स उठे धु ए के कारण ही आकाश नीला दिखाई पडता है। कौवे काले हो जाते हैं। कही रक्त के आसुओ की बूदें टेसू के फूलो नई कोपलो और गु जा के दानो के रूप मे बिखरी दिखाई पडती हैं। कहीं जगत् को डुबाने वाले अश्रु प्रवाह के खारेपन स समुद्र खारे हो जाते हैं। कही भस्मीभूत शरीर का राख का एक एक कण हवा के साथ उडता हुआ प्रिय के चरणो मे लिपटना चाहता है। इसी प्रकार कहीं प्रिय का श्वाँस मलयानिल होकर लगता है, कही उसके अ ग का स्पश कपूर के कदम या कमल दलो की खाडी म ढकेल देता है।[१]

अब हम यह देखना है कि सूरदासजी ने काय के इन दो स्वरूपो मे से किसको अधिक महत्व दिया और किसको कम। यहाँ यह कह देना अनुचित नही होगा कि सूरदासजी ने कही पर भी कवियो की अतिरजित या प्रलपित उक्तियों का अनुकरण नही किया है उनके काय म भावो की अभि यजना उसी रूप म हुई है जिस रूप मे मनुष्य को उनकी अनुभूति हुआ करती है या हो सकती है। रामकाय' के अतिरिक्त उनके गोपी विरह वणन म अवश्य कही-कही पर कवियो की इस अतिरजित शली का अनुकरण किया गया है। जसे—

दूर करहु बीना कर धरियो।

माहे मृग नाही रथ हाँक्यो नाहिन हीत चद को ढरिबो।

यहाँ वीणा के वादन स चन्द्रमा के रथ के मृग का माहित होकर स्थिर हो जाना और चन्द्रास्त का न होना इसी श्रेणी के अ तगत आयेगा। ये पक्तियाँ सूरदास की उक्ति वचित्र्यता को ही प्रकट करती हैं। किन्तु जब हम सूर के राम काय की ओर दृष्टिपात करत हैं तो उसके अ तगत कही पर ही ऐसी अतिशयोक्ति पूण बात हम दृष्टिगोचर नही होती। वास्तव मे सूरदासजी ने इसके अ तगत जीवन की वास्तविक दशाओ का चित्रण और मार्मिक पक्षो का उद्घाटन ही किया है काल्पनिक वचित्र्य विधान नहीं।

---

१ गोस्वामी तुलसीदास आचाय शुक्ल प० ६० ९१

सूर की निर्भीक और गम्भीर वाणी जहाँ एक ओर कुतूहल उत्पन्न कर अपनी ओर आकर्षित करती है, वहीं दूसरी ओर हृदय के मर्मस्थलों का स्पर्श करती हुई, सच्ची और गम्भीर अनुभूति को जागृत करती है। वह श्रोताओं और पाठकों को ऐसी भूमियों पर ले जाकर खड़ा करने में ही अग्रसर रही है जहाँ से जीते जागते जगत की रूपात्मक और क्रियात्मक सत्ता के बीच भगवान की भावमयी मूर्ति की झाँकी मिल सकती है।

भाव पक्ष

काव्य समीक्षा में कविता की आत्मा और शरीर दोनों का विवेचन होता है। कविता की आत्मा उसके भाव और विचार है, तथा शैली उसका शरीर है। दण्डी ने काव्य में दोनों का महत्व स्वीकार किया है। यही दोनों कवि के भावपक्ष तथा कला पक्ष कहलाते हैं।

भक्त कवि सूरदास के पदों का प्रमुख आधार भाव ही है। भक्तिभाव से प्रेरित होकर ही वे कविता के क्षेत्र में प्रवृत्त हुए। यद्यपि उनका सूरसागर "श्री मद्भागवत के अनुसार ही बारह स्कन्धों में विभाजित है। उसमें वर्णित कथाक्रम भी श्रीमद्भागवत के कथाक्रम का ही अनुसरण करता है, पर पद की गेय शैली के भावात्मक प्रवाह में सूर का भावुक हृदय जगह जगह पर बह गया है। जिन पदों में श्रीमद्भागवत की इतिवृत्तात्मकता नहीं है उनमें सूर का भावप्रवाह तरंगित हो उठा है तथा उन पदों की समाप्ति में श्रीमद्भागवत का हवाला न होकर भावतरंग की उच्चतम सीमा चित्रित हुई है। 'हा जगदीश राखि यहि अवसर प्रगट पुकारि कहयौ। सूरदास उमगे दोउ नैना सिंधु प्रवाह बहयौ।' इत्यादि पदान्त सूर के भावात्मक मौलिक पदों के लक्षण है।[1]

भाव–अनुभाव वर्णन

सूर आचार्यों द्वारा गिनाए हुए भावों और अनुभवों में ही बंध कर नहीं चले हैं अपितु उन्होंने तो दाम्पत्य रति के अतिरिक्त भगवद् विषयक रति और वात्सल्य विषयक रति को भी इसकी कोटि तक पहुंचाया है और आचार्यों द्वारा प्रतिपादित शृङ्गार रस सम्बद्ध संचारियों के अतिरिक्त अन्य कितनी ही मनोदशाओं की अभिव्यक्ति कर शृङ्गार को रस राजत्व प्रदान किया है, यही तो सूर का सूरत्व है।

---

१ 'रामचरित शाखा' रामनिरंजन पांडेय पृष्ठ ३६६

सूर ने अपने रामकाव्य में भावों और अनुभावों का उत्कृष्ट चित्रण प्रस्तुत किया है।

सूर के प्रिय चक्षु मार्मिक स्थलों की पहचान कर मार्मिक चोट करते हुए पाठक के हृदय को आत्मविभोर बना देते हैं और बिहारी के दोहों की भाँति घाव गम्भीर न कर सन्त कवियों की साखियों के सदृश घावों को भरते दृष्टिगत होते हैं।

अनुभावों के वर्णन में तो सूर ने बिहारी को भी पीछे रख दिया है अनुभावों का चित्रण इस पद में कितना सुन्दर चित्रित हुआ है—

'कर कंप कंकण नहिं छूटै।
राम सिया कर परस मगन भय कौतुक निरखि सखि सुख लूटै।'

कंकण मोचन के समय सीता के हाथ का स्पर्श करके राम स्नेह के आवेग में मग्न हो गये। सात्विक अनुभाव का कम्प उनके हाथों में पैदा हो गया, व कंकण नहीं छोड़ सके। जुआ खेलने के समय भी वे कोमल हृदय होने के कारण सीता से हार जाते हैं। इसके अतिरिक्त भी कई स्थानों पर अनुभावों का चित्रण उत्कृष्ट रूप से हुआ है।

संयोग पक्ष

सूर का संयोग वर्णन एक क्षणिक घटना नहीं है, प्रेम संगीत मय जीवन की एक गहरी चलती धारा है जिसमें अवगाहन करने वालों को दिव्य माधुर्य के अतिरिक्त और कहीं कुछ नहीं दिखाई पड़ता।[1]

धनुर्भंग के पहिले ही जब सीताजी की दृष्टि रामचन्द्रजी पर पड़ती है तभी उनका हृदय उनके प्रति आकर्षित हो जाता है और वे ईश्वर से इस प्रेम प्राप्ति के लिये आराधना करती हैं—

'बिनै रघुनाथ बदन की ओर।
रघुपति सों अब नेम हमारो, विधि सों करत निहोर।'

इसके बाद कंकण मोचन के समय श्री राम और सीता का एक दूसरे के प्रति आकर्षण और प्रेम अद्भुत रूप से परिलक्षित हुआ है।

---

1 'भ्रमर गीतसार' आचार्य शुक्ल पृष्ठ १०

वनगमन के प्रसङ्ग पर राम द्वारा सीता का जनकपुर जाने के आदेश पर
ता का यह कथन उनके पारस्परिक प्रेम का द्योतक है—

> "ऐसो जिय न धरो रघुराई।
> तुम सो प्रभु तजि मो सी दासी, अनत न कहूँ समाई।
> तुम्हरो रूप अनूप भानु ज्यो, जब नैनन भरि देखौं।
> ता छिन हृदय कमल प्रफुल्लित ह्व जनम सफल कर लेखौं।
> तुम्हरे चरन कमल सुख सागर, यह व्रत हौं प्रतिपलिहौं।
> सूर सकल सुख छाडि आपनो बन बिपदा सग चलिहौं॥

दाम्पत्य रति के अतिरिक्त वात्सल्य और भक्ति विषयक रति का भी उन्होंने
द्भुतता के साथ वर्णन कर उन्हे रस की कोटि तक पहुचाया है।

वियोग पक्ष

सयोग की अपेक्षा वियोग शृङ्गार का साहित्यिका ने अधिक उच्च स्थान
या है क्योंकि जहाँ सयोग म प्रिय सान्निध्य से प्राप्त सुख हृदय की अनेक सात्विक
त्तियो को तिरोहित किए रहता है, वहाँ वियोग उन्हें उद्बुद्ध कर भावो के प्रसार के
ए समस्त विश्व का क्षेत्र खोल देता है। इसी दशा म कालिदास के यक्ष ने अपनी
रयतमा को सन्देश भेजने के हेतु आषाढ के प्रथम मेघ को रोक लिया, जायसी की
प गविता नागमती न भौंरे और काग के हाथो प्रिय को सन्देसडा' भेजने का विचार
या और तुलसी के राम खग, मृग' और 'मधुकर श्रेणी' से सीता का पता पूछते
रे।[1]

सूर ने जितनी निपुणता एव व्यापकता के साथ सयोग का वर्णन किया है
तनी ही दक्षता एव तन्मयता के साथ वियोग का भी उनके राम सीता के वियोग म
ुलसी के राम की भाँति वन के वृक्षो और वल्लरियो स पता पूछते फिरते हैं।

> 'फिरत प्रभु पूछत वन द्रुम वेली।
> अहो बन्धु काहू अवलोकी इहि मग वधू अकेली।

कभी वे सीता का नाम पुकार पुकार कर धरा पर लोटने लगते हैं, और कभी
सकी याद कर आँखों से आँसू बहाने लगते हैं। स्वय सूरदास भी राम के प्रेमकी गुरुता

---

१ सूर और उनका साहित्य डा० हरवशलाल पष्ठ ३३६

को देखकर विचार म पड जाते हैं, जो इस वियोग स दु खित होकर अपनी महिमा तक को भुला देते हैं।

उधर सीता भी विरह विदग्ध अशोक वाटिका में उग चकित, हिरनी के सदृश, इधर उधर देख रही है जो अपनी सगियो से बिछुड गई हो।

"बिछुरी मनो सग त हिरनी।
चितवन रहत चकित चारो दिसि, उपजी विरह तन जरनी।'

हनुमान के द्वारा सदेश भेजती हुई सीता कहती है कि 'हे पवनसुत तुम स्वय मेरी गति देखे जाते हो, मैं तुमस क्या सन्देशा कहूँ। य चचल प्राण पलायन करने को आतर हो रहे हैं। इनको कहाँ तक रोक कर रक्खूँ, करुनामय प्रभु से इतना कहना क उन्होंने कभी मेरा दु ख नहीं सुना।'

' यह गति देख जात, सँदेसो कस क जू कहौं।
सुनु कपि अपा प्रान को पहरो कब लगि देति रहौं।'

'इतनी बात जनावति तुमसौं सकुचति हौं हनुमन्त।
नाहीं सूर सु यो दुख कबहू प्रभु करुनामय कत।'

सूरदास का विप्रलम्भ भी ऐसा ही विस्तृत और व्यापक है, जसा सयोग। वियोग की जितनी भी अन्तदशाएँ हो सकती हैं जितने ढगो से उन दशाओ का सहित्य म वर्णन हुआ है और सामा यत हो सकता है व सब सूर के काव्य म दृष्टिगत होती हैं।

कला पक्ष

सूरदासजी ने भक्तिभाव स प्रेरित होकर ही अपने काव्य का निर्माण किया। उनका लक्ष्य प्रमुखत भगवान क यशोगान का वर्णन करना मात्र था। मध्ययुगीन भक्त कवियो की भाँति वे यश अर्थ आदि के प्रलोभनो से मुक्त थे। उस युग क प्रतिनिधि कवि तुलसी न स्पष्ट लिखा है—

स्वान्त सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा
भाषानिबन्ध मतिमञ्जुल मातनोति

इन सब बातो को दृष्टिगत करते हुए भी जब हम प्रचलित परिपाटी के अनुसार सूर के काव्यों का दिग्दर्शन करते है तो प्रतीत होता है कि उनके काव्य मे उनका व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से झलकता है। सूर के भावविधान मे मनोवैज्ञानिकता को विशेष स्थान मिला है। उनका वात्सल्य और विरह का चित्रण तो विश्व साहित्य मे अपना जोड नही रखता। आलोचना के नवीन सिद्धान्तो जिसके अनुसार मनोविश्लेषण का बडा महत्व है की कसौटी पर भी उनकी कविता खरी उतरती है और भारतीय आलोचना पद्धति के अनुसार भी सूरदास महान कवि ठहरते हैं। काव्य के भावपक्ष और कलापक्ष दोनो मे ही वे अनुपम है। सर्वप्रथम हम उनकी शैली पर दृष्टिपात करते हैं।

गेय पद शैली

सूर ने अपनी रचना गेय पदो मे की है। गीत शैली हृदय की कोमल भावनाओ को व्यक्त करने के लिये नितान्त उपयुक्त है क्योंकि गीत लय की मधुर लहरियो को स्वरो के रेशमी सूत्र में बाँधकर चलते हैं यही कारण है कि प्राचीन गीतों मे अधिकतर शृङ्गार, करुण और शान्त रसो की ही अभिव्यक्ति हुई है और वीर रस के गीत बहुत कम मिलते है।

साहित्य मे परम्परा से चली आती हुई शृंगार और प्रेम की भावना के साथ अनेक कवियो ने भगवत्प्रेम का समन्वय किया। अपने उपास्य का शृंगार और प्रणय वर्णन करने मे अनेक कवि भाव विभोर होने लगे। अपने वर्णनो के लिये गीत शैली को ही चुना। शृंगार भक्ति और वात्सल्य की त्रिवेणी का अपने पदो मे समावेश कर इन कवियो ने पग पग पर प्रयाग का सृजन किया, जिसकी यात्रा करके साधारण जनता भी मन का मल धोने लगी। जयदेव का "गीत गोविन्द' इस सम्बन्ध मे विशेष उल्लेखनीय है। उसके गीत आज भी उत्तर प्रदेश के पूर्वी सीमान्त तथा बिहार मे साधारण गायक और भजनीको द्वारा गाये जाते हुए सुने जाते हैं। इधर मथिल कोकिल विद्यापति ने भी अपने राधाकृष्ण विषयक शृंगारिक गीतो की एसी तान छेडी जिसकी कूक विविध कवि विहगवृन्द की कल कल ध्वनि को पराभूत कर मिथिला के आम्रकुञ्ज पुञ्जो को गुञ्जित करती हुई दक्षिण की ओर से प्रवृत्त भक्ति समीर का आधार ले उत्तर की ओर बढकर ब्रज में कालिन्दी कूलस्थ कदम्बो को आनन्दित करती हुई वृन्दावन के 'कोटिनहू कलधौत के धाम' से भी सुन्दर करीर कुञ्ज वृन्दो मे गूंजने लगी।

इस प्रकार सूरदास को एक परम्परागत विकसित गीत शैली प्राप्त थी जिसके माध्यम से वे अपनी भक्ति भावना को भली प्रकार व्यक्त कर सकते थे। किन्तु उन्होंने इस गीत शैली में भी पूर्ववर्ती कवियों का अन्धानुसरण न करते हुए उसके कलेवर में नवीनता का संचार किया है। उनकी अपनी विशेषताओं की मुद्रा सूरसागर के प्रत्येक पृष्ठ पर लगी हुई है। सूर की रचना में जो व्यंग्य, सजीवता, स्वाभाविकता, चित्रमयता एवं भावगाम्भीर्य पद पद पर प्राप्त होते हैं वे विद्यापति और जयदेव में कहां ?

गीतकाव्य का शैली आत्माभिव्यंजन और मुक्तक काव्य की दृष्टि से अत्यन्त उपयुक्त है। जिस भाव की एक एक शृंखला को सुसज्जित गुलदस्ते के रूप में सजाना है भावधारा की एक एक लहर का सजीव चित्र उपस्थित करना है, अपनी अनुभूति का अंग अंग आकर्षक रूप में प्रकट करना है उसके लिये गीतिकाव्य के अतिरिक्त अन्य कौन शैली उपादेय सिद्ध होगी।" इसके आगे वे लिखते हैं, 'इस गायन में ऐसी कौनसी रागिनी है जो सूरसागर में न आई हो। कहा जाता है कि सूर के गान ऐसे राग और रागनियों में हैं जिनमें से कुछ के तो लक्षण भी अब प्राप्त नहीं हैं। ऐसी राग रागनियाँ या तो सूर की अपनी सृष्टि है या उनका अब प्रचार नहीं है।[1]

काव्य और संगीत का जैसा सामंजस्य सूर के पदों में मिलता है वैसा अन्यत्र नहीं। श्री शिखरचन्द जैन ने सूर एक अध्ययन के पृष्ठ ३७ पर लिखा है—

'संगीत विषयक इस ज्ञान की कसौटी पर जब सूर कसे जाते हैं, तब वह बहुत ऊँचे उठ जाते हैं। वास्तव में यदि काव्य और संगीत का सच्चा समन्वय कोई प्रकृत रूप से कर सका है तो वह सूर ही हैं। इस सम्बन्ध में सूर और तुलसी की तुलना करते हुए वे आगे लिखते हैं—'जहाँ तुलसी की मर्यादित पदावली संगीत के माधुर्य को कितने प्रसंगों में कम कर देती है वहाँ सूर की प्रकृत रूप से प्रवाहित होने वाली वाग् लहरी स्वाभाविकता, सादगी, अल्हड़पन और प्रमाद को समान रूप से लिये हुए आगे बढ़ती है। तुलसी के अनावश्यक रूप से प्रयुक्त बड़े-बड़े रूपक भी संगीत लहरी में अवरोध उपस्थित करते हैं, पर सूर के रूपक छोटे आवश्यक एवं हुए सरल आकर्षक और संगीत के लिये उपयुक्त हैं। इसीलिये तुलसी संगीत का

---

१ सूर सौरभ मुंशीराम शर्मा पृष्ठ ३८३

वह माधुर्य न ला सके, जो उनका शृङ्गार है। ऐसा करने में सूर समर्थ हो सके हैं। उन्होंने संगीत की स्वर लहरी को सरलता, भावुकता, प्रवीणता और दक्षता के साथ प्रवाहित किया है।"

डा हरवंशलाल ने भी 'सूर और उनका साहित्य' के पृष्ठ २६० पर लिखा है—'सूर के विशाल मानस मे भाव रस का इतना उद्रेक था कि वह हठात् वाणी के बांध को तोड़ता हुआ फूट पड़ा है। कृष्ण के सौन्दर्य, हाव भाव और व्यापारोंके चित्रण मे ब्रजवासी नर नारियो की भावनाओ के प्रकाशन म, गोप बालकों के बालसखा सुलभ केलि कौतुक के अङ्कन मे, किशोरी, युवती और वृद्धाओं के चापल्य, औत्सुक्य वात्सल्य आदि के अभिव्यंजन मे अपनी बन्द आखो और उन्मुक्त कल्पना से भाव जगत के द्रष्ठा और सृष्टा सूर ने वह कमाल हासिल किया कि हिन्दी के ही नहीं विश्व भाषाओ के गीतकार मान है। उनके पदो म उनकी 'सूरता' छिपाये नही छिपती वयक्तिकता और आत्माभिव्यंजन, जो गीत काव्य का सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख लक्षण है सूर के गीतों म अथ स लेकर इति तक व्याप्त है।'

आकार की दृष्टि से कहीं १ सूर ने पद गीतकाव्य की मर्यादा का उल्लघन कर गये हैं पर ऐसा उन्हीं स्थलों पर हुआ है जहां कवि कथा के तारतम्य को अक्षुण्ण रखने के लिए घटनाओं का वर्णन करता है, जैसे पद सख्या ४१४ ४२७, ४४० ४६५,४७१ आदि परन्तु ऐसे पद अधिक संख्या म हैं भी नहीं।

उसके अतिरिक्त सूर के पदों में जो दूसरी बात खटकती है वह हैं पौराणिक प्रसगो व सकेतो की भरमार तथा वर्णविषय, भाषा आदि की पुनरावृत्ति। किन्तु उसके इस गतिरोध मे भी चित्रोपम सौन्दर्य हैं,जिसमें मूक जीवन का सचार स्पष्ट दीख पडता है और ऐसे स्थानो पर पुनरावृत्ति काव्य का दूषण न होकर भूषण हो जातीहै।

विरह के पदों में कवि विशेष रूप से मुखर हो उठा हैं और उसकी गेयपद शैली अन्तर्मुखी हो गई है। यही कारण हैं कि इन पदा मे कवि के व्यक्तित्व की पूरी छाप दृष्टिगोचर होती है। राम जब लक्ष्मण को सीता की अग्नि परीक्षाके लिए हुताशन रचन की आज्ञा देते हैं तो सूरदास हनुमान के बहाने आसू बहाने लगते हैं और कहते है कि यह दृश्य मुझसे नहीं देखा जाता। १

सूरदासजी ने दृष्टिकूट पद भी अपने सूरसागर मे गेय शैली मे लिखे हैं, जिनमें चमत्कारिता और दुरूहता होती है और जो साधारणत आत्मचिन्तन के गूढ विषयों को रहस्यात्मक भाषा मे प्रकट करने का साधन मात्र है। किन्तु इस प्रकार के

१ 'देखिये पद सख्या ६०६ नवम् स्कन्ध'

श्लेष अलंकार

आजु दसरथ के आंगन भीर।
ये भू भार उतारन कारन प्रगटे स्याम सरीर।
यहाँ स्याम के दो अर्थ, कृष्ण और श्याम रंग वाले हैं।

उल्लेख अलंकार

मित्र मन स कुच, इ द्र मन गोविंद सुख दुख विधिहिं समान।
दिति दुवन अति अदिति हुल्सित, देखि सूर सधान। (प० स० ४६४)

उपमा

सूर ने उपमा म एक नया रूप प्रस्तुत किया।
"लगत सेष उर विनखि जगत गुह अद्भुत गति नहि परनि विचारत।"

उत्प्रेक्षा

दसरथ कौसिल्या के आगे लसत सुमन की छड़ियाँ।
मानो चारि हंस सरवर त बैठे धाइ सदहियाँ।

रूपक

"चरन सरोज बिना अवलोके, को सुख परसि भने"

साग रूपक

"कटि केहरि कोकिल कल बानी ससि मुख प्रभा धरी।
मृग भूलो नैननि की सोभा जाति न गुप्त करी।
चपक वरन चरन कर कमलनि, दाडिम दसन लरी।
गति मराल अरु बिम्ब अधर छबि, अहि लनूप कबरी।" (प म ५०७)

भाषा

सूरदासजी न अपने काव्य के लिए अपने इष्टदेव की विहार भूमि ब्रज की ही भाषा को अपनाया, किन्तु ब्रजभाषा को सुव्यवस्थित परिनिष्ठित और साहित्यिक रूप देने का श्रेय सूरदास को ही हैं। उनके पूर्व हिंदी के प्राचीन साहित्य म या तो अपभ्रंश मिश्रित डिंगल पाई जाती थी या साधुओं की पचमेली खिचडी भाषा। कोमलकान्त पदावली के साथ सूर की ब्रजभाषा सानुप्रास, स्वाभाविक, प्रवाहमयी सजीव और भावों के अनुरूप बन पड़ी है।

पद सूर के राम का नाम कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होते। क्योंकि उनका अभिप्राय इसमें किसी गूढ़ विषय का स्पष्टीकरण करना न होकर केवल मात्र मार्मिक स्थलों का चित्रण कर उन पर अपने भाव प्रकट कर देना है।

अलङ्कार योजना

का व्यशास्त्र में अलङ्कारों की चर्चा इस से भी प्राचीन है। वास्तव में साहित्य विद्या को प्राचीन आचार्यों ने अलंकार शास्त्र से ही अभिहित किया है। आज के युग में अलङ्कारों को सर्वप्रथम स्थान तो नहीं दिया जाता पर उनकी नितान्त अव हेलना भी साहित्यकार नहीं कर सके हैं। वे उक्त भावों के उत्कर्ष हेतु और सौन्दर्य बोध में सहायक के रूप में ही ग्रहण करते हैं। सगुणभक्त कवियों में जहाँ एक ओर हिन्दी की पूर्व प्रचलित काव्य शैलियों के परिष्कृत और परिनिष्ठा रूप के दर्शन होते हैं, वहां दूसरी ओर उनकी अलङ्कार योजना भी कम महत्व की नहीं है।

सूर साहित्य में अलङ्कारों का प्रयोग बहुत ही संतुलित ढंग से मिलता है इसीलिए सूर की शैली में अलङ्कारों का वह रूप नहीं जो कि साहित्य का ही अपना योर खींचले और पाठक विषय तथा भावना को भूलकर अलङ्कार की लपेट में अपने को खो बैठे या उससे चमत्कृत हो उठे। उन्होंने अलङ्कार का प्रयोग कहीं भी अलङ्कार के लिए नहीं किया वरन् इसलिए किया कि उनकी भावना तथा कल्पना को उत्कर्ष मिले और काव्य की प्रभावात्मा को बल प्रदान हो सके। उनके अलंकार केशव की भांति पांडित्य प्रदर्शन के लिए नहीं, अपितु किसी भाव, गुण, रूप या क्रिया का उत्कर्ष प्रकट करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

डा० हरवंशलाल ने पृष्ठ २९७ पर उनकी अलङ्कार योजना की सार्थकता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है 'उनकी अलङ्कार योजना में न तो केशवदास के समान काव्यशास्त्र ज्ञान प्रदान की प्रवृत्ति है और न जायसी के समान एक एक पंक्ति में कई-कई अलङ्कार ठूसकर संकर और संसृष्टि करने का आग्रह ही। जहाँ रीतिकालीन कवि अनेक अलङ्कारों से सजाने की धुन में अपनी कविता नागरी को ग्राम्य रूप देकर बिनायक प्रकुर्वाणो रचयामास वानरम्' वाली उक्ति को चरितार्थ कर आलोचकों के उपहास्य बन वहीं सूर ने भाव और कलापक्ष का उचित सन्तुलन रखकर अपनी कला को 'कला' ही बना दिया।'

सूर के अलङ्कार अत्यन्त स्पष्ट और सिने गिनाय हैं उन्होंने रूपक, उपमा, रूपकातिशयोक्ति उत्प्रेक्षा आदि अलङ्कारों के ही प्रति अपना विशेष प्रेम प्रकट किया है। फिर भी यदि कोई गोता लगाने का साहस कर सके तो उनके सूरसागर में से मात्र अलङ्कार रूपी रत्नों को जितना भी चाहे निकाल सकता है।

श्लेष अलंकार

आजु दसरथ के आँगन भीर।
ये भू भार उतारन कारन प्रगटे स्याम सरीर।
यहाँ स्याम के दो अर्थ, कृष्ण और श्याम रंग वाले है।

उल्लेख अलंकार

सिव मन स्च, इन्द्र मन गानद सुख दुख विधिहिं समान।
दिति दुखन अति, अदिति हुल्सित, देखि सूर सधान। (प० स० ४६४)

उपमा

सूर ने उपमा में एक नया रूप प्रस्तुत किया।
"लगत सेष उर बिनखि जगत गुह अदभुत गति नहि परनि विचारत।

उत्प्रेक्षा

दसरथ कौसिल्या के आगे लगत सुमन की छुरियाँ।
मानौ चारि हस सरवर त बैठे आइ सदहियाँ।

रूपक

'चरन सरोज बिना अवलोके को सुख धरमि मन'

सांग रूपक

'कटि केहरि कोकिल कल बानी ससि मुख प्रभा धरी।
मृग भूलो नैननि की सोभा जानि न गुप्त करी।
चपक बरन चरन कर कमलनि, दाडिम दसन लरी।
गति मराल अरु बिंद अधर छबि, अहि लनूप कबरी।' (प स ५०७)

भाषा

सूरदासजी ने अपने काव्य के लिए अपने इष्टदेव की विहार भूमि ब्रज की ही भाषा को अपनाया किन्तु ब्रजभाषा को सुव्यवस्थित परिनिष्ठित और साहित्यिक रूप देने का श्रेय सूरदास का ही हैं। उनके पूर्व हिन्दी के प्राचीन साहित्य मे या तो अपभ्रंश मिश्रित डिंगल पाई जाती थी या साधुओं की पंचमली खिचड़ी भाषा। कोमलकान्त पदावली के साथ सूर की ब्रजभाषा सानुप्रास, स्वाभाविक, प्रवाहमयी सजीव और भावों के अनुरूप बन पड़ी है।

सूरदासजी ने ब्रजभाषा के सामान्य रूप में तत्सम शब्दों का प्रयोग करके उसे केवल उत्तराखंड की ही नहीं अपितु समस्त भारतवर्ष की भाषा बना दिया है। संस्कृत के तत्सम शब्दों में यह बात लक्ष्य करने की है कि उन्होंने उन शब्दों को ब्रजभाषा की ध्वनि के अनुकूल ही बना दिया है।

तद्भव शब्द भी काफी संख्या में लिये गये हैं साथ ही अन्य देशी भाषाओं और अरबी फारसी आदि विदेशी भाषाओं के शब्दों का भी महत्वपूर्ण योग है। परन्तु अरबी फारसी के शब्दों को उसके मौलिक रूप में प्रयुक्त न करके प्रचलित रूपों में ही प्रयुक्त किया गया है। सूर की भाषा विषयक यह उदारता ब्रजभाषा को समृद्धिशालिनी और प्रभावशालिनी बनाने में बड़ी सहायक सिद्ध हुई है।

लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी सूर की भाषा में प्रचुर रूप में हुआ है। इनके द्वारा जहाँ एक ओर भाषा की व्यंजना शक्ति बढ़ती है वहाँ दूसरी ओर इनमें सजीवता और प्रभावोत्पादकता भी आ जाती है जैसे —

"बक स्वान सिंह बलि खाइ" प स ४८१
'मूँ जत वया यह खेत' प स ४८३ इत्यादि।

लेकिन सूर की भाषा पर विचार करते समय हमें यह विस्मृत नहीं होने देने चाहिए कि उनके रामकाव्य में सामान्यतः भाषा का वह उत्कृष्ट रूप जो कि श्लाघनीय है, नहीं प्राप्त होता। कहीं कहीं तो भाषा का सामान्य रूप जिनमें कथा का तारतम्य जुड़ा हुआ है ही प्राप्त होता है, और कहीं इससे ऊपर उठकर। इसका सबसे प्रमुख कारण यही है कि उनका उद्देश्य किसी प्रकार के दार्शनिक विचारों को स्पष्ट करना और उनका प्रभाव औरों पर डालना नहीं था, अपितु राम सम्बन्धी मार्मिक स्थलों का चयन मात्र था।

सूर उन कवियों में नहीं जो भाव और अनुभूति के स्थान को चुन चुन कर सजाए हुए शब्दों और अलंकारों से भरकर कविता कामिनी को हृदय रहित प्रस्तर प्रतिमा बनाकर रस देने का प्रयास करते हैं और केशवदास की भांति मान प्रदान करने अथवा जायसी की भाँति एक एक पंक्ति में कई कई चमत्कार ठूँसकर मंथर और समृष्टि करने का आग्रह ही रखते हैं, अपितु उनकी भावरस धारा तो उस उमड़ती नदी के सदृश है जो अपने सरल भाषा रूपी कूल किनारों के नियमित सरल पथ में प्रवाहित होने से मदमय होकर, चमत्कार पूर्ण वक्र वचना के विस्तृत क्षेत्र में फैल जाती है। सचमुच सूर ने भाव और कला पक्ष का उचित संतुलन रखकर अपनी कला को 'कला' ही बना लिया है।

उपसंहार

उपसंहार

"साहित्य के सूर्य' सूर हिन्दी साहित्य के ही क्यों विश्व साहित्य के उन गिने चुने कलाकारों में से हैं, जिनकी लेखनी से कविता सरस प्रवाह के रूप में प्रवाहित हुई तथा अबाधगति से बहती गई और एक दिन वह प्रवाह 'सागर' बन गया। वह 'सागर' जिसमें अगाध जल है, और अनन्त रत्नराशि भी पड़ी है जिनकी प्राप्ति के लिए जनमानस प्रयत्नशील है और जिनको प्राप्त कर अपने आप को धन्य समझता है।' १

रामनिरंजन पांडेय ने अपने ग्रंथ 'रामभक्ति शाखा' के पहले अध्याय के प्रथम पृष्ठ पर रामकाव्य का जन समाज में अधिक प्रचलित रूप होने के कारण पर प्रकाश डालते हुए कृष्ण काव्य की अपेक्षा उसका अधिक जन समाज के निकट आना और उसे अपने जीवन में उतारने के सम्बन्ध में लिखा है।

"भारत में राम का अवतार साधारण मनुष्य के रूप में हुआ था। इसी लिए राम साधारण मनुष्य के हृदय के पास अधिक स्वाभाविक और अधिक स्पष्ट रूप से आ सके। कृष्ण के अवतार के साथ जन्म से ही पारमार्थिक शक्तियों का इतना अधिक सम्बन्ध है कि साधारण मनुष्य उन्हें न तो अविकृत रूप से अपने हृदय में रख सकता है, और न इस अवतार के जीवन के रहस्यों को पूरी तरह से समझ ही सकता है। कृष्ण के अवतार को समझने में गलती करने के कारण ही साधारण भारतीय जनता कभी कभी राधाकृष्ण और गोपीकृष्ण के सम्बन्धों में भ्रान्त धारणा और भावना ग्रहण करके विलासी और असंयमित जीवन की ओर चली गयी। पर राम के जीवन में ऐसी कोई जटिलता नहीं थी जो जीवन पथ पर अग्रसर होने वाले मानव को भ्रम में डाल देती। राम का अवतार पूर्णतः बोधगम्य था और उसके सहारे जीवन पथ का पथिक कहीं भ्रान्त नहीं हुआ बराबर शील के विकास की ओर ही बढ़ा। हिन्दी कविता के क्षेत्र में 'नानापुराणनिगमागम' से चुने हुए भाव सम्पत्ति और विचार सम्पत्ति के रत्नों को समुचित और स्वाभाविक स्थान पर सजो कर गोस्वामी तुलसीदासजी ने राम के जीवन को साधारण मनुष्य के चलने के लायक भव्य राजमार्ग का एक रूप प्रदान किया।

सूरदासजी ने सूरसागर में राम और कृष्ण की अभेदोपासना के आधार पर उपासना की है। इसमें कोई सन्देह नहीं नवम स्कन्ध में तो श्रीमद्भागवत की योजना का अनुसरण करते हुए सूरदासजी ने रामावतार का वर्णन किया है पर अन्यत्र भी उन्होंने राम को अपने हृदय से दूर नहीं होने दिया है नवम स्कन्ध के

१ करुण रस-मध्ययुगीन हिन्दी रामकाव्य के परिवेश में डा० ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव

१७२ तक के १५८ पदों को छोड़कर भी सूरसागर में प्राय ६८ पदों में राम चर्चा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हो जाती है । रामनिरजन पाडेय ने 'राम भक्ति शाखा' में इन पदों की निम्न रूप में तालिका दी है —

सूरसागर, पद सख्या ३,११ १३,१८,२५,२६,२८,३४ से ३६ तक, ३६,४३ ५४,५७ ५६ ६१,६६,७१,८६,६०,६२,६४,१०५,११६,१२३,१३२,१३५ १४५,१५१ १५८ १७६,१७८ से १८० तक,१८२'१८८,१६१,२१५ २१६ २३२ २३३ २३५ २५५ २६३,२६४ २६६,२६७,३०६,३०८,३१०,३११,३१८,३३०,३४० ३४६ ३५१, ३७६, ४२१,४२२ ८१६,८१७,८३६,६२०,११८६ १५६६,१६०१,१८३१ ३४१०,३४३१,३४३४ ३४४६,३६६६ ३७४६,३७५१ ३७५३ ३७५७ ३७८१ ३७८६,३८४७ ३८८६,३६०१, ३६७६,४०१६,४१३३ ४२७६,४४३१ ४४५७ ४६२७ ४७१२,४८२६,४८३३,४६३४ परिशिष्ट १, पद सख्या २,३ १३६ १३७ परिशिष्ट २, पद सख्या २०५ और २४० ।

वास्तव में इन पदों की सख्या देखते हुए इसमें कोई सन्देह नहीं कि सूर राम और कृष्ण में कोई अन्तर नहीं समझते थे जैसा कि उन्होंने कई पदों में प्रदर्शित किया है । कई स्थानों पर तो उन्होंने कृष्ण के स्थान पर राम का ही नाम लिखा है इसके कुछ उदाहरण आचार्य मुन्शीराम शर्मा सोम ने अपने 'सूर सौरभ' में पृष्ठ २४३ पर दिये हैं ।

जा वन राम नाम अमृत रस श्रवण पात्र भरि पीजै ।
राम भक्तवत्सल निज बानौं । १, ११
जौ तू राम नाम चित धरतौ । १, १७६
कलि मे राम कहै जो कोइ ।
निश्चय भव जल तरिहै सोइ १२, २
कहा कमी जाके राम धनी । १ २४
अब ते रसना राम कह्यौ ।
मानो धर्म साधि सब बैठ्यो पढ़िबे मे धौ कहा रह्यौ ।
सार कौ सार सकल सुख कौ सुख हनुमान शिव जानि कह्यौ । २ ४
राम नाम बिनु क्यों छूटौगे चन्द गहे ज्यों केत ।
सूरदास कछु खर्च न लागत राम नाम मुख लेत । ६ १७५
बड़ो है राम नाम की ओट इत्यादि ।

सूर ने अन्य अवतारों का भी वर्णन किया है पर राम और कृष्ण का वर्णन करते हुए तो वे इतने तन्मय हो जाते हैं कि उन्हें दोनों में कुछ भी भेद नहीं

प्रतीत होता । गोस्वामी तुलसीदासजी ने राम की स्तुति में कहीं भी कृष्णावतार की घटनाओं का वर्णन नहीं किया। उनके अन्तर्गत कृष्ण राम समत्व की ऐसी प्रवृत्ति दृष्टिगत नहीं होती। किंवदन्ती है कि एक बार मथुरा में कृष्ण मूर्ति के दर्शन करने से उन्होंने इन्कार कर दिया था। उन्होंने अपने अद्भुत रामप्रेम को प्रदर्शित करते हुए कहा— तुलसी मस्तक तब नव, धनुष बान लो हाथ।'

वस्तुत सूर उच्चकोटि के भक्त थे, ऐसे भक्त जिनमें किसी प्रकार का गर्व और अहंकार नहीं। किन्तु इस निरभिमानता के साथ ही उनके हृदय में निश्छलता एवं स्पष्टवादिता भी थी जिसके फलस्वरूप वे अपने हृदयाकाश में उत्पन्न होने वाले भाव रूपी मेघों को काव्याम्बर की भूमि पर बरसाने में तुलसी की तरह झिझके नहीं। उन्होंने अपने जीवन में किसी भी प्रकार के प्रतिबन्ध को स्वीकार नहीं किया। उनकी स्पष्टवादिता निर्भीकता, उनके सत्यभाव पर निर्भर थी। जिस भाव को लेकर वह अपने आराध्य देव की भक्ति करते थे। किन्तु इस विशेषता ने काव्य की उत्कृष्टता के चरम शिखर पर पहुँचाने में जितनी सहायता की, वह अकथनीय है। इससे उन्हें चहुँ ओर उड़ने और चक्कर लगाने के अवकाश मिल गये। फलस्वरूप वे अपने काव्य के प्रत्येक क्षेत्र का कोना कोना झाँक आये हैं। उनकी दृष्टि बड़ी सूक्ष्म थी, जिसकी दूरदर्शिता ने अपने अङ्क में कामादन के साथ उसके वैभव का भी बटोर लिया।

सूर का रामकाव्य, जो कि आज अन्धकारपूर्ण अस्तित्व लिए बैठा है जिसका काव्य सौन्दर्य की धुँधली आभा के सदृश टिमटिमा रहा है जो एक अच्छे घराने की सन्तान होकर भी अनजानी एवं नादान बालक के सदृश महत्वहीन समझा जाता रहा है एक दिन प्रकाश में आने पर अपनी आभा पथक से विकीर्ण करते हुए जनमानस को मोह लेगा।

इस रामकाव्य से, जनसाधारण को नीति का उपदेश, सत्कर्म की प्रेरणा, दुःख में धैर्य, आनन्दोत्सव में उत्साह, कठिन परिस्थिति पार करने का बल, सब कुछ प्राप्त हो सकता है। इसके आदि, मध्य और अन्त की गंभीरता की थाह डूबने से ही मिलती है।

श्रीरामार्पणमस्तु

आधार ग्रन्थ

१	सूर और उनका साहित्य'	डा हरवंशलाल शर्मा
२	'सूर सौरभ	आचार्य मुन्शीराम शर्मा 'सोम'
३	रामभक्ति शाखा'	रामनिरंजन पाण्डेय
४	सूरदास	डा ब्रजेश्वर वर्मा
५	सूर मीमांसा'	"
६	'हिन्दी साहित्य का इतिहास'	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
७	गोस्वामी तुलसीदास'	"
८	तुलसी रसायन	डा भागीरथ मिश्र
९	सूर साहित्य और सिद्धान्त'	यज्ञदत्त शर्मा
१०	साकेत एक अध्ययन	डा नगेन्द्र
११	'साकेत	मैथिलीशरण गुप्त
१२	भ्रमरगीतसार'	सम्पादक आचार्य शुक्ल
१३	सखी सतसई	संकलनकर्ता वियोगी हरि
१४	रामकथा	डा फादर कामिल बुल्के
१५	'मानस की रामकथा'	परशुराम चतुर्वेदी
१६	'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास'	डा रामकुमार वर्मा एवं डा त्रिलोकीनारायण दीक्षित
१	'सूर एक अध्ययन	शिखरचन्द जैन
१८	'करुण रस—मध्ययुगीन हिन्दी काव्य के परिवेश में'	डा ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव
१९	'कामायनी अनुशीलन'	रामलालसिंह